अध्याय–2

मानवाधिकार–अर्थ एवं प्रकृति

(MEANING AND NATURE OF HUMAN RIGHTS)

द्वितीय विश्व युद्ध के बाद विश्व स्तर पर मानवधिकारों की धारणा का विकास तथा विश्व राजनीति की एक महत्वपूर्ण विशेषता है। वास्तव में मानवधिकारों के विकास की कहानी विश्व में लोकतंत्र के विकास की कहानी है। प्राचीन युग में यूनानी विचारकों ने व्यक्ति के अधिकारों की बजाय उसके कर्तव्यों पर अधिक बल दिया था, लेकिन अरस्तू ने राजनीतिक प्रक्रिया में व्यक्ति की भागीदारी को उसके विकास के लिए आवश्यक बताया था। कार्ल मार्क्स ने 19वीं शताब्दी में अपने चिन्तन में व्यक्ति के सामाजिक और आर्थिक अधिकारों पर विशेष बल दिया। पूंजीवादी व्यवस्था में उन्पन्न हो रहे शोषण से व्यक्तिों के अधिकार की रक्षा करने के लिए मार्क्स के विचार अत्यन्त लोकप्रिय हुए। मार्क्सवाद के प्रभाव के कारण ही वर्तमान में व्यक्ति के अधिकारों में सामाजिक तथा आर्थिक अधिकारों को भी शामिल कर लिया गया है।

लेकिन बीसवीं शताब्दी के पूवार्द्ध में जर्मनी व इटली के तानाशाही शासन के दौरान व्यक्ति के अधिकारों को नई चुनौती का सामना करना पड़ा। इटली में मुसोलिनी तथा जर्मनी में हिटलर के तानाशाही शासन में धीरे–धीरे लोकतंत्र व व्यक्ति के अधिकारों को समाप्त कर दिया। नाजी जर्मनी में जातीय उन्माद, यहूदियों के

सामूहिक नरसंहार के रूप में सामने आया। ये घटनायें विश्व के इतिहास में व्यक्ति के अधिकारों के लिए सबसे बड़ी चुनौती थीं। इन तानाशाहों ने विश्व को द्वितीय विश्वयुद्ध की विभीषिका में ढकेल दिया। द्वितीय विश्व युद्ध के बाद मानव अधिकार और लोकतंत्र को मजबूत बनाने के लिये विश्व समुदाय ने प्रयास आरंभ किये, जिसका परिणाम मानव अधिकारों के रूप में देखने में आया। विश्व शांति के लिए संयुक्त राष्ट्र संघ की स्थापना तथा 10 दिसम्बर, 1948 को महासभा मानवधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा, मानवाधिकारों व लोकतंत्र की चुनौती का सामना करने के लिये महत्वपूर्ण हैं।

मानव अधिकार वे अधिकार है, जो हमारी प्रकृति, स्वभाव या व्यक्तित्व विकास के साथ जुड़े हुए हैं। मनुष्य को अपने सुप्त गुणों एवं क्षमताओं के विकास के लिए कुछ अधिकारों की आवश्यकता होती है, क्योंकि इन्हीं अधिकारों से स्वतंत्रता की अभिव्यक्ति होती है और स्वतंत्र वातावरण में मनुष्य के व्यक्तिगत गुणों का विकास संभव होता है। मानव अधिकार और मौलिक स्वतंत्रताएँ हमको पूर्णरूप से विकसित होने के लिए अवसर प्रदान करती है, साथ ही इनके द्वारा मानवीय गुणों, प्रतिभाओं तथा चेतना का सदुपयोग किया जाता है। यह अधिकार मानवता पर आधारित है।

मानवधिकारों का सीधा सम्बन्ध मानवीय सुखों से है और सुख की अवधारणा को तभी से मानना श्रेयस्कर होगा जब ये मानव जाति, समाज एवं राज्य का उदय हुआ है। काल क्रमानुसार मानव सुख का दायरा विस्तृत हुआ और यह समाज, राष्ट्र और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर पल्लवित हुआ। बेबीलोनियन नियमों, बेबीलोन के हम्मूराबी, लैगास के

कालीन, अक्कड के सारगोन, के काल के दौरान भी मानवाधिकार का उल्लेख भी मानवधिकारों की पुष्टि करता है।

मानवाधिकारों की संकल्पना

(Concept of Human Rights)

मानवधिकारों की संकल्पना मात्र राजनीतिक और नैतिक संकल्पना ही नहीं, अपितु विविध संकल्पना भी है। वर्तमान में मानवधिकार विकसित विधिशास्त्रीय विषयवस्तु बनने की ओर प्रवृत्त हो रहे है। संयुक्त राष्ट्र संघ की स्थापना के बाद से विद्वानों की यह धारणा बन गयी है कि ''एक व्यक्ति को मानवधिकार राज्य के विरूद्ध अधिकार प्रदान करतें हैं।'' इसी प्रकार मानवधिकार सार्वभौम प्रकृति के अधिकार कहे जा सकते हैं, लेकिन निरपेक्ष प्रकृति के अधिकार नहीं। कोई भी व्यक्ति चाहे उस देश का निवासी हो या नहीं, उसे वे सभी अधिकार प्राप्त होंगे जो उस क्षेत्र के निवासी को प्राप्त हैं अतः मानवधिकार सार्वभौमिक अधिकार है।

मानवधिकार का अर्थ एवं परिभाषा

(Meaning and Definition of Human Rights)

मानव अधिकार वे आवश्यक परिस्थितियां हैं, जो प्रत्येक व्यक्ति को बिना किसी भेदभाव के मनुष्य होने के कारण प्राप्त होती हैं। मानवाधिकारों के बिना कोई भी व्यक्ति मनुष्य के रूप में अपना अस्तित्व नहीं बनाये रख सकता, न ही अपना विकास कर सकता है। मानव अधिकार विश्व कोश के अनुसार, ''मानव अधिकार वे

अधिकार हैं जो किसी व्यक्ति व उनके समूह को मानव होने के परिणामस्वरूप प्राप्त हैं।''

अधिकार का अर्थ (Meanig of Rights)

सामान्य अर्थ में 'अधिकार' शब्द का आशय यह है कि मनुष्य कुछ मूलभूत तत्वों से संयुक्त है। अग्रेंजी कहावतों में अधिकार अर्थात् केवल 'अधिकृत करना' शब्द के लिए प्रयुक्त होता है, अधिकार के लिए भी कुछ परिभाषाएँ निम्न प्रकार दी गयी है।

(1) अधिकारों को कई दृष्टियों से देखा गया है, मानव अधिकार कानूनी रूप में, सामाजिक एवं नैतिक रूप में परिभाषित होते हैं।

(2) **हैराल्ड लास्की के अनुसार** ''अधिकार मानव जीवन की ऐसी परिस्थितियाँ है जिनके बिना सामान्यतया कोई व्यक्ति अपने व्यक्तित्व का पूर्ण विकास नहीं कर सकता।''

(3) **बाइल्ड के अनुसार** ''अधिकार कुछ विशेष कार्यों को करने की स्वाधीनता की उचित माँग है।''

(4) **बोसांके के अनुसार** ''अधिकार वह माँग है जिसे समाज स्वीकार करता है और राज्य लागू करता है।''

(5) **श्रीनिवास शास्त्रीय के अनुसार** ''अधिकार समुदाय के कानून द्वारा स्वीकृत वह व्यवस्था, नियम अथवा रीति है जो नागरिक के सर्वोच्च नैतिक कल्याण में सहायक हो।''

इस प्रकार अधिकार राज्य द्वारा व्यक्ति को दी गई कुछ कार्य करने की स्वतंत्रता अथवा सकारात्मक सुविधा प्रदान करना है जिससे व्यक्ति अपनी शारीरिक, मानसिक एवं नैतिक शक्तियों का पूर्ण विकास कर सके।

मानवधिकार का अर्थ

(Meaning of Human Rights) मानव अधिकारों से आशा है मानव के अधिकार से है।

मानवधिकार व्यक्ति के वे अधिकार है जिनके बिना मानव अपने व्यक्तित्व' के पूर्ण विकास के बारे में सोच भी नहीं सकता, जो कि मानव में मानव होने के फलस्वरूप अन्तर्निहित हैं। मानवधिकार वे अधिकार हैं, जो एक मानव होने के नाते निश्चित रूप से मिलने चाहिए। यह अधिकार जाति, लिंग, राष्ट्रीयता, भाषा, धर्म और रंग आदि के किसी भी भेद–भाव के बिना सभी मनुष्यों के लिए सामान रूप से लागू होता है हम यह भी कह सकते हैं कि यह अधिकार मानव को उसके जीवन को सभ्य और सरल बनाने के लिए उपयोगी है तभी तो इस अधिकार की रक्षा और समर्थन अन्तर्राष्ट्रीय और राष्ट्रीय कानूनों और संधियों द्वारा किया जाता है।

मानवधिकार की विभिन्न विद्वानों द्वारा निम्नलिखित परिभाषाएँ स्पष्ट की गई हैः

(1) **आर. जे. विसेट के अनुसारः**– ''मानव अधिकार वे अधिकार हैं जो प्रत्येक व्यक्ति को मानव होने के कारण प्राप्त हैं। इन अधिकारों का आधार मानव स्वभाव में निहित है।''

(2) **डेविड सेलवाई के अनुसारः**– ''मानव अधिकार संसार के समस्त व्यक्ति को प्राप्त हैं, क्योंकि यह स्वयं में मानवीय है, वे पैदा नहीं जा सकते, खरीद या संविदावादी प्रक्रियाओं से मुक्त होते हैं।''

(3) **ए.ए. सईद के अनुसारः**– ''मानव अधिकारों का संबंध व्यक्ति की गरिमा से है एवं आत्म सम्मान का भाव जो व्यक्तिगत पहचान को रेखांकित करता है तथा मानव समाज को आगे बढ़ाता है।''

(4) **डी.डी. बसु के अनुसार**–'' मानव अधिकार वह अधिकार है जिन्हें प्रत्येक व्यक्ति को बिना किसी भेद–भाव के मानव परिवार का सदस्य होने के कारण राज्य तथा अन्य लोक सेवक के विरूद्ध प्राप्त होने चाहिए।''

(5) **प्लानों एवं ओल्टन के अनुसार** –''मानव अधिकार वे अधिकार है जो मनुष्य के जीवन, उसके अस्तित्व एवं व्यक्तित्व के विकास के लिए अनिवार्य है।''

(6) **यूनाइटेड ऑफ ह्युमन रॉइट्स के अनुसार** –''मानवाधिकारों को उन अधिकारों के रूप में परिभाषित किया है जो हमारे स्वभाव में निहीत हैं और जिसके बिना हम मानव अधिकारों को नहीं जी सकते।''

(7) Universal Declaration of Human Rights [UDHR] के कथन के अनुसार– ''समाज के प्रत्येक व्यक्ति और हर समुदाय को इन अधिकारों और स्वतंत्रता के लिए, सम्मान और बढ़ावा देने के लिए राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर, उनकी सार्वभौमिक और प्रभावी मान्यता और पालन को सुरक्षित करने के लिए शिक्षण और शिक्षा द्वारा प्रयास किया जाएगा।''

इस प्रकार उपरोक्त परिभाषाओं में विद्वानो ने मुख्यता तीन बातों पर बल दिया है– मानव स्वभाव, मानव गरिमा और समाज का अस्तित्व।

मानवाधिंकार की विविध परिभाषाओं के अध्ययन के बाद भी यही कहा जा रहा है कि ''मानवाधिकार शब्द की विश्व में कोई एक स्वीकृत परिभाषा नहीं मानी जा सकती है। यद्यपि यह संकल्पना उतनी ही पुरानी है जितनी कि प्राकृतिक विधि पर आधारित प्राकृतिक अधिकारों का प्राचीन सिद्धान्त तथापि 'मानव अधिकारों' की अवधारणा की नये रूप में उत्पत्ति द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात् अन्तर्राष्ट्रीय चार्टरों और अभिसमयों से हुई। सर्वप्रथम, अमेरिकन तत्कालीन राष्ट्रपति रूजवेल्ट ने 16 जनवरी, 1941 को कांग्रेस को संबोधित अपने प्रसिद्ध संदेश में ''मानव अधिकार'' शब्द का प्रयोग किया था, जिसमें उन्होंने चार मूलभूत स्वतन्त्रताओं– 1. वाक् स्वातंत्र्य 2. धर्म स्वातंत्र्य 3. गरीबी से मुक्ति 4. भय से स्वातंत्र्य। इन चारों स्वातंत्र्य से देश के अनुक्रम में राष्ट्रपति द्वारा घोषणा किया की, कि ''स्वातंत्र्य से हर जगह मानवाधिकारों की सर्वोच्चता अभिप्रेत है।''

प्रसिद्ध फ्रांसीसी दार्शनिक **जीन जैक्स रूसो** ने भी अपनी पुस्तक ''सोशल कॉन्ट्रेक्ट'' में लिखा है कि ''मनुष्य स्वतन्त्र पैदा हुआ है, परन्तु हर जगह वह जंजीरो से जकड़ा हुआ है।'' इन्होने इसके माध्यम से समाज में अव्यवस्था, शोषण तथा असमानता के बंधनों से जकड़े हुए जनसाधारण की स्वतंत्र होने की ओर स्वाधीनता, स्वतन्त्रता तथा समानता का उत्तम जीवन प्राप्त करने की आकांक्षा को व्यक्त किया था। मानव अधिकारों की परिभाषाओं के समान इसकी विशेषताओं से भी मानव अधिकार अधिक स्पष्ट हो सकते हैं।

मानव अधिकारों की विशेषताएँ

(Features of Human Rights)

मैक्फारलेने ने अपनी पुस्तक The theory and practice of Human Rights में मानव अधिकारों की पाँच प्रमुख विशेषताएँ बनाई हैं जो निम्नलिखित हैं–

(1) सर्वोच्चता (Paramount):– मानव अधिकारों को सर्वोच्च इसलिए माना जाता है, क्योंकि राज्य द्वारा जनहित के आधार पर इन अधिकारों का अतिक्रमण नहीं किया जा सकता है। विश्व के प्रत्येक देश में इन अधिकारों को संवैधानिक एवं कानूनी आधार पर संरक्षण प्रदान किया जाना अनिवार्य होता है। अतः मानवअधिकारों में सर्वोच्चता व्याप्त है।

(2) व्यक्तिगत्ता (Individuality) :– मानव अधिकारों की अवधारणा की व्युत्पत्ति मानव के स्वतंत्र व्यक्ति के रूप में जन्म लेने से सम्बन्धित है। जिसके अन्तर्गत माना जाता है कि व्यक्ति के पास सोचने एवं समझने की शक्ति होती है अर्थात् वह बौद्धिक प्राणी है। इस बौद्धिकता के कारण व्यक्ति स्वयं अपना भला–बुरा सोचने एवं नैतिक स्वतंत्रता के रूप में उसे अपने कार्यों के निर्धारण की स्वतंत्रता प्राप्त होनी चाहिए।

(3) सार्वभौमिकता (Universality) :– मानव अधिकार सभी व्यक्तियों में, सभी समयों पर तथा प्रत्येक स्थितियों में प्राप्त होते हैं इसलिए इन्हे सार्वभौमिक के तत्व का अनुसरण करते हुए माना जाता है। इसी के साथ संयुक्त राष्ट्र संघ के चार्टर के अन्तर्गत भी कहा गया है कि मानव अधिकार ऐसे अधिकार होते हैं जो कि प्रत्येक व्यक्ति को प्राप्त होते हैं अर्थात् ये अधिकार किसी एक विशेष राजनीतिक एवं सामाजिक स्थिति से प्रतिबद्ध नहीं होते हैं।

(4) कियान्वयन योग्य (Enforceable) :– मानव अधिकारों से तात्पर्य ऐसे अधिकारों से होता है जो कि वास्तविक रूप से कियान्वयन किये जाने योग्य होते हैं, अर्थात ऐसे अधिकारों को कोई महत्व नहीं होता है, जिन्हें कियान्वयन करना सम्भव नहीं होता है। परन्तु मानव अधिकार ऐसे अधिकार होते हैं, जिन्हें राष्ट्रीय एवं स्थानीय मानव अधिकार संरक्षण एजेन्सियों द्वारा कियान्व्यन किया जाना सम्भव होता है।

(5) व्यावहारिकता (Practicablity) :– मानव अधिकार सभी व्यक्तियों के लिए होते हैं तथा उन्हें व्यावहारिक तभी माना जा सकता है, जबकि वह समाज के प्रत्येक व्यक्ति को कम से कम इतना अवसर एवं सुविधाएँ प्रदान करें, जिनमें वह अपना जीवनयापन कर सके। मानव अधिकार केवल सरकारी या कानूनी नियमों तकम ही सीमित न रहकर उन्हें व्यावहारिक रूप में सभी को प्रदान करना हीं व्यावहारिकता है।

(6) **मानवाधिकार अपरिवर्तनीय है (Human Rights are Immutable)**– मानवाधिकार अपरिवर्तनीय है क्योंकि उन्हे किसी शक्ति या अधिकार द्वारा प्राप्त नहीं किया जा सकता है। यह अधिकार मनुष्य के सामाज में मनुष्य के सामाजिक स्वभाव के साथ ही उत्पन्न होते है वे केवल एक व्यक्ति के होते हैं।

(7) **मानवाधिकार गतिशील है (Human Rights is Dynamics)**– मानव अधिकार स्थिर नहीं है, वे गतिशील है। राज्य के भीतर सामाजिक पर्यावरण, सांस्कृतिक एवं राजनीतिक विकास के साथ ही मानवाधिकारों का विस्तार होता है।

(8) **मानवाधिकार अविच्छेद है (Human Rights is Inseparable)**– मानव अधिकारों को उसके अस्तित्व की प्रकृति के कारण एक व्यक्ति पर विचार विमर्श किया जाता है। ये अपनी जाति, पंथ, धर्म, लिंग और राष्ट्रीयता के बावजूद सभी व्यक्तियों में जन्मजात से ही प्राप्त है। मानव अधिकार किसी व्यक्ति को उसके मृत्यु के बाद भी प्रदान किया जाता है। विभिन्न धर्मों में विभिन्न अनुश्ठान इस तथ्य की गवाही देते हैं।

मानवाधिकारों की प्रकृति

(Nature of Human Rights)

मानवाधिकार ऐसे अधिकार होते हैं, जिनका राज्यों द्वारा आदर किया जाना अनिवार्य है। साथ ही ये अधिकार ऐसे मापदण्ड होते हैं जिनके माध्यम से राज्य के कार्यों का मूल्यांकन किया जाना सम्भव हो जाता है। मानव अधिकारों की प्रकृति को मुख्यतः दो भागों में बाँटा जाता हैः

(1) मानव अधिकारों के संरक्षण में राज्य का सकारात्मक रूप (Positive Role of state in protection of Human Rights)– मानव अधिकार सकारात्मक रूप से ऐसे अधिकार हैं जिसके अन्तर्गत राज्य द्वारा अपने नागरिकों के लिए कुछ सुविधाएँ या स्वतंत्रता प्रदान करने के लिए प्रयास करता है, अर्थात राज्य अपने यहाँ इस प्रकार की दशाओं का निमार्ण करेगा, जिसमें प्रत्येक व्यक्ति स्वतंत्रता प्रदान प्रत्येक व्यक्ति स्वतंत्रता एवं गरिमा के साथ जीवनयापन कर सके। उदाहरणतः बच्चों के लिए मुफ्त शिक्षा, महिलाओं को समानता एवं सम्पूर्ण विकास के अवसर मिलना, गरीब एवं असहायों के लिए मुफ्त कानूनी सहायता, सरकार द्वारा गरीबों के खाने एवं रहने की व्यवस्था आदि अधिकार इसमें शामिल किए जाते हैं।

(2) मानव अधिकारों के संरक्षण में राज्य का नकारात्मक स्वरूप (Negative Role of state in protection of Human Rights) – नकारात्मक अधिकार से तात्पर्य ऐसे

अधिकारों से है जिनके द्वारा राज्यों को कुछ करने से रोका जाता है। जिसके अन्तर्गत किसी भी व्यक्ति को कानूनों के उल्लंघन के बिना बन्दी नहीं बनाया जा सकता है। किसी भी व्यक्ति को अकारण ही अपने विचार व्यक्त करने से नहीं रोका जा सकता है। किसी भी व्यक्ति को धर्म, संप्रदायं, जाति के अनुसार आचरण करने से नहीं रोका जा सकता है। इन नकारात्मक अधिकारों की सीमाएँ प्रत्येक देश व राज्य के आधार पर अलग–अलग हो सकती है।

मानवाधिकारों का वर्गीकरण

(Classification of Human Rights)

मानवाधिकार का वर्गीकरण करना बहुत कठिन कार्य है क्योंकि यह विषय अत्यंत विशाल है, फिर भी मानवाधिकारों का निम्न अनुसार वर्गीकरण किया जा सकता है।

(1) नैतिक अधिकारः– मानवाधिकारों में नैतिक अधिकार निष्पक्षता और न्याय के सामान्य सिद्धान्तों पर आधारित होते हैं। इन आदर्शों को प्राप्त करने के लिए समाज में कुछ आदर्श रखे जाते हैं। नैतिक अधिकार, राज्य अधिकार द्वारा सुरक्षित नहीं होती है, अतः इनका मानना व्यक्तिगत इच्छा पर निर्भर होता है। नैतिक अधिकारों को धर्म शास्त्र तथा जनता की आत्मिक चेतना के दबाव में स्वीकार करवाया जाता है।

(2) नागरिक एवं राजनीतिक अधिकारः– नागरिक और राजनीतिक अधिकार राज्य द्वारा स्वीकार किया जाता है। यह सामाजिक जीवन के लिए आवश्यक है। प्रत्येक देश के राजनीतिक

कियाकलापों में जिम्मेदारी एवं भागीदारी निभाना इस तरह अधिकारों का मुख्य लक्षण है। उदारवादी प्रजातांत्रिक व्यवस्थाओं में नागरिक एवं राजनैतिक अधिकारों का विशिष्ट महत्व है।

(3) प्राकृतिक अधिकारः— प्राकृतिक अधिकार मानव स्वभाव में निहित अधिकार होते हैं। ये अधिकार प्राकृतिक रूप से मनुष्य में होते हैं। स्वप्रज्ञा की अधिकार, मानसिक स्तर का अधिकार, **जीने का अधिकार** आदि इसी कोटि में आते हैं। प्रकृति से प्राप्त होने के कारण ये स्वाभाविक रूप से मानव स्वभाव में निहित होते हैं।

(4) कानूनी अधिकारः— कानूनी अधिकार तात्पर्य यह है कि प्रत्येक व्यक्ति बिना किसी भेदभाव के कानून के समक्ष समान समझा जायेगा तथा साथ ही कानूनों का समान संरक्षण भी दिया जाना चाहिए। कानून के समक्ष समानता तथा कानून का समान संरक्षण इसका सर्वोच्च उदाहरण है।

(5) मौलिक अधिकारः— मौलिक अधिकार वे अधिकार हैं जिनके बिना मनुष्य का विकास नहीं हो सकता है। जैसे मानव को जीवन जीने की स्वतंत्रता, धर्म, भाषा, संस्कृति को अपनाने की स्वतंत्रता, आदि मौलिक अधिकार हैं। व्यक्ति के व्यक्तित्व विकास के लिए इन अधिकारों को अब परिहार माना गया है।

(6) आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारः— इस तरह के अधिकार बहुत व्यापक होते हैं। प्रत्येक राज्य में अपनी परम्परा एवं सभ्यता के अनुसार इन अधिकारों को लागू किया जाता है। भारतीय संविधान के अध्याय चार के नीति निदेशक तत्व मनुष्य के आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक अधिकारों की माँग राज्य से करते

हैं। यह निर्धारण करना कठिन है कि कौन–सा अधिकार अधिक महत्वपूर्ण है और कौन–सा कम। मानव अधिकारों के संबंध में वैश्विक घोषणा के बाद मानव अधिकारों पर विशेष ध्यान दिया गया है। संक्षेप में कहा जा सकता है ''कि मानव जीवन के समग्र विकास के लिए सभी अधिकारों की सुरक्षा एवं लागूकरण अनिवार्य है।''

पीढ़ी के अनुसार मानवाधिकारों का वर्गीकरण

(Classification of Human Rights as per Generation)

मानवाधिकारों के वर्गीकरण को अनेक तरह से वर्गीकृत किया गया है। मानवाधिकारों के वर्गीकरण को **लुइस बी. सोहत** ने अपनी पुस्तक ''The New International Law; Protecion of the rights of individuals rather than of state'' में निम्न तीन भागों से स्पष्ट किया है:

(i) प्रथम पीढ़ी मानवाधिकार

(Human Rights of First Feneration)

प्रथम पीढ़ी के मानवाधिकारों में वे मानवाधिकार हैं जो चिरकाल से परम्परागत रूप में विद्यमान रहे हैं, इसके अंतर्गत राजनीतिक तथा नागरिक अधिकारों का समावेश है। ग्रीस के नगर राज्यों में भी इनका अस्तित्व था। मानव तथा नागरिकों के अधिकार की फ्रांसीसी

घोषणा, मैग्नाकार्टा, स्वतन्त्रता की अमेरिका घोषणा में भी इन अधिकारों का अस्तित्व पाया जाता है। सिविल एवं राजनीतिक प्रसंविदा, अन्तर्राष्ट्रीय प्रसंविदा, अमेरिकी एवं अफ्रीकी दस्तावेजों, यूरोपिन अभिसमयों में भी इन अधिकारों की झलक देखी जा सकती है, भारत एवं विश्व के सभी देशों के संविधान में भी इन अधिकारों का समावेश है। चिरकालिक होने के कारण ही इन अधिकारों को प्रथम पीढ़ी के मानवाधिकार की श्रेणी में लिया गया है।

(ii) द्वितीय पीढ़ी के मानवाधिकार

(Human Rights of Second Generation)

द्वितीय पीढ़ी के मानवाधिकारों के अन्तर्गत आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक अधिकारों को जो अन्तर्राष्ट्रीय प्रसंविदा में सम्मिलित हैं, लिया जाता है। ये अधिकार भारतीय संविधान के भाग 3 में समाहित हैं, जबकि सामाजिक एवं आर्थिक अधिकार भारतीय संविधान के भाग 4 में वर्णित हैं। ऐसा माना जाता है कि आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक अधिकारों का विकास सिविल एवं राजनीतिक अधिकारों को प्रभावशाली एवं सार्थक बनाने के लिए हुआ है क्योंकि निश्चित रूप से इन अधिकारों के बिना सिविल एवं राजनीतिक अधिकारों का कोई महत्व नहीं है।

(iii) तृतीय पीढ़ी के मानवाधिकार

(Human Rights of Third Generation)

अधिकारों के वर्गीकरण में तृतीय पीढ़ी के अन्तर्गत सामूहिक अधिकारों का समावेश किया गया है। इसके अंतर्गत व्यक्तियों के संयुक्त रूप से कुछ अधिकार होते हैं जो जनता और राष्ट्र क बड़े समुदाय के रूप में समूह का निर्माण करते हैं। ये अधिकार सामूहिक अधिकार हैं, जिन्हें तृतीय पीढ़ी के अधिकार कहा जाता है। विकास का अधिकार, शान्ति का अधिकार एवं आत्मनिर्णय का अधिकार मूल रूप से तृतीय पीढ़ी के अन्तर्गत आते हैं।

मानव अधिकारों का महत्व

[Important of Human Rights]

वर्तमान में मानवाधिकारों का मुद्दा विश्व समुदाय के समक्ष एक महत्वपूर्ण मुद्दा बन गया है। मानवाधिकारों का महत्व निम्न बिन्दुओं के अन्तर्गत समझा जा सकता है :

1. विश्व शान्ति व सुरक्षा के लिये आवश्यक—यह सवाल अक्सर उठाया जाता है कि जब अधिकांश लोकतांत्रिक देशों द्वारा अपने संविधान में मौलिक अधिकारों की व्यवस्था कर ली गयी है तो संयुक्त राष्ट्र द्वारा मानव अधिकारों की अलग से व्यवस्था करने की क्या आवश्यकता है? इस सवाल का उत्तर उन परिस्थितियों में खोजा जा सकता है जिनके कारण द्वितीय विश्व युद्ध हुआ तथा उन कारणों का निदान कर तीसरे विश्व युद्ध को रोकने के प्रयास शुरू किये गये। यह माना जाता है कि द्वितीय विश्व युद्ध का एक प्रमुख कारण इटली और जर्मनी में तानाशाही शासनों का अस्तित्व था, जिसमें लोकतंत्र व व्यक्ति के अधिकारों का हनन कर दिया था।

यदि इन देशों में भी लोकतंत्र व नागरिक अधिकरों की जड़ें मजबूत होतीं तो इन देशों के शासक अपने साथ विश्व के अन्य देशों को युद्ध के खतरे में नहीं डाल पाते। इसका तात्पर्य यह है कि विश्व के किसी भी देश में नागरिकों के अधिकारों अथवा लोकतंत्र का अभाव विश्व शांति व सुरक्षा के लिए सबसे बड़ा खतरा है। अतः विश्व को तीसरे विश्व युद्ध की विभीषिका से बचाने के लिए तथा विश्व शांति की स्थापना करने के लिए मानवाधिकारों का भी संरक्षण आवश्यक है। इसी तथ्य को ध्यान में रखते हुए अमेरिका के राष्ट्रपति रूजवेल्ट ने विश्व शांति व सुरक्षा के लिए चार स्वतंत्रताओं– भाषण की स्वतंत्रता, उपासना की स्वतंत्रता, भय से स्वतंत्रता तथा अभाव से स्वतंत्रता को शांति व सुरक्षा की पूर्व शर्तों के रूप में घोषित किया। ये चार स्वतंत्रतायें मानवाधिकारों का ही रूप हैं।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि मानव अधिकारों का पालन विश्व शांति व सुरक्षा के लिए आवश्यक है। इसीलिए संयुक्त राष्ट्र ने विश्व स्तर पर मानव अधिकारों को लागू करने का प्रयास किया है। निष्कर्ष यह है कि मानवाधिकारों का गंभीर उल्लंघन विश्व व क्षेत्रीय शांति को खतरा उत्पन्न कर सकता है। अतः विश्व सुरक्षा के लिये मानवाधिकारों की रक्षा आवश्यक है।

2. मानव तथा समाज के विकास के लिये आवश्यक– मानवाधिकार ऐसी अनिवार्य परिस्थितियां हैं जिनके बिना कोई व्यक्ति एक मनुष्य के रूप में अपना विकास सुनिश्चित नहीं कर सकता है। व्यक्ति को अपने विकास के लिये विभिन्न प्रकार के सामाजिक, राजनीतिक तथा अन्य अधिकारों की आवश्यकता होती है।

मानवाधिकार बिना किसी भेद–भाव के सभी मनुष्यों के लिए इन अधिकारों की व्यवस्था करते हैं। इसी प्रकार मानव सभ्यता व संस्कृत का विकास भी विश्व स्तर पर मानवाधिकारों के अनुपालन की बिना संभव नहीं है।

3. लोकतंत्र की सफलता के लिये आवश्यकता– लोकतंत्र व मानवाधिकार एक–दूसरे के पूरक हैं। यदि विश्व स्तर पर लोकतंत्र को सफल बनाना है तो मानवाधिकारों के अनुपालन की व्यवस्था विश्व स्तर पर की जानी आवश्यक है। लोकतंत्र मानव गरिमा का पोषक है तथा मानवाधिकार मानव गरिमा की मूल धारणा पर ही आधारित हैं। मानवाधिकारों की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता जीवन के प्रत्येक क्षेत्र–सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीति में मानव गरिमा को स्थापित करना है। इसके अलावा मानवाधिकार स्वतंत्रता, भाईचारा, समानता तथा न्याय पर बल देकर लोकतंत्र को सफल बनाने कार्य करते हैं।

मानवाधिकारों का वैश्विक परिप्रेक्ष्य

(Global Perspectives of Human Rights)

प्राचीनकाल में मानवाधिकार विषय विविध प्राचीनतम साहित्य एवं धार्मिक पुस्तकों में उपलब्ध रहा है। बाइबिल, रामायण, वेद, कुरान शरीफ, महाभारत, श्रीमद्भागवत गीता तथा जैन, बौद्ध एवं सिख धर्म ग्रन्थों में मानवाधिकार की अवधारणा चिरन्तन रूप से विद्यमान है। हैरोकिट्स, सुकरात, सोफिस्ट, प्लेटो, अरस्तु, जेनो,

कौटिल्य, सिसरो, पौडलस, धीरू वल्लुवर की रचनाओं में भी मानवाधिकार की अवधारणा मिलती है। संयुक्त राष्ट्र संघ ने मानवाधिकारों को प्राथमिकता दी और 1945 में अमेरिका के सान–फ्रांसिस्को नगर में इसके द्वारा मानवाअधकार आयोग की स्थापना की गई। उसने मानव अधिकारों की सार्वभौम घोषणा का मसौदा तैयार किया। 10 दिसम्बर, 1948 को संयुक्त राष्ट्र संघ की साधारण सभा में इस मसौदे को प्रस्तुत किया गया, जिसने इस घोषणा को स्वीकृत और घोषित किया। मानवाधिकारों सम्बन्धी इस ऐतिहासिक कंदम के पश्चात् संयुक्त राष्ट्र संघ की महासभा ने अपने भ्झी सदस्य देशों से अपील की कि वे इस घोषणा का प्रचार करें तथा देशों अथवा प्रदेशों की राजनीतिक स्थिति पर आधारित किसी भी भेदभाव के बिना, विशेष रूप से स्कूलों और अन्य शिक्षण संस्थाओं में इसके प्रचार, प्रदर्शन, पठन और व्याख्या की व्यवस्था करें। इस घोषणा का विश्व के अनेक देशों ने स्वागत किया और उन्होंने अपने देशों में इस घोषणा को कानूनी रूप से लागू करने की कोशिश की। इसके पश्चात् संयुक्त राष्ट्र संघ ने मानवाधिकारों की रक्षा के लिए निम्नांकित दस्तावेज भी विश्व के सामने प्रस्तुत किए–

1. नागरिक एवं राजनीतिक अधिकारों का प्रतिज्ञा–पत्र, 1966,

2. आर्थिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक अधिकारों का प्रतिज्ञा–पत्र, 1966,

3. अन्तर्राष्ट्रीय एजेंसी को याचिका देने हेतु वैयक्तिक अधिकारों के लिए ऐच्छिक पूर्व संधि, 1966,

4. कैदियों के साथ व्यवहार के लिए मानक नियम, 1971,

5. कानून प्रवर्तन अधिकारियों के लिए संयुक्त राष्ट्र संघ की आचार संहिता, 1979,

6. किशोर अपचारिता के सम्बन्ध में न्याय के प्रशासन हेतु मानक नियम, 1985,

7. शक्ति के दुरूपयोग और अपराध के शिकार व्यक्तियों के लिए मूलभूत न्यायिक सिद्धान्तों की घोषणा, 185,

8. न्यायिक स्वतंत्रता के मूलभूत सिद्धान्त, 1985

9. क्रूर, अमानवीय या अपमानजनक व्यवहार अथवा दण्ड की यातना के खिलाफ कन्वेंश, 1985।

इस प्रकार मानवाधिकार जो कि प्राचीनकाल से विद्यमान था, परन्तु वास्तविकता में उन्हें लागू नहीं किया जा रहा था, उसे संयुक्त राष्ट्र संघ के प्रयत्नों द्वारा पूरे विश्व के देशों में फैला दिया गया।

मानवाधिकारों का भारतीय परिप्रेक्ष्य

(Indian Perspective of Human Rights)

भारत की सभ्यता एवं संस्कृति पाँच हजार वर्षों से भी अधिक प्राचीन है। प्राचीन भारत में धर्म की अवधारणा में ही व्यामक मानवीय सामाजिक व्यवस्था के रूप में मानव अधिकारों पर विचार किया गया था। प्राचीन भारत में सनातन धर्म का विधान न केवल धार्मिक एवं

नैतिक विधान था। वेद, वेदांत, उपनिषद, गीता आदि सभी भारतीय ग्रंथों ने इस बात पर बल दिया कि **'सत्य एक है' तथा परमात्मा सभी आत्माओं में विद्यमान रहता है।** महाभारत का तो यह सूत्र वाक्य ही है कि **'मनुष्य से बड़ा कुछ भी नहीं है।'** इस प्रकार प्राचीन भारत में मानवाधिकारों का व्यापक रूप से विकास हुआ। इसी प्रकार जैन धर्म के 24वें तीर्थकर महावीर स्वामी ने **'व्यक्तिगत स्वतंत्रता'** पर विशेष बल दिया। चाणक्य ने अपने ग्रंथ अर्थशास्त्र में राजनीतिक, सामाजिक एवं आर्थिक विधान का प्रतिपादन किया था।

इसके पश्चात् प्राचीन भारतीय इतिहास में भी अशोक आदि के काल में मानवाधिकारों का उल्लेख है। फिर मध्यकालीन इतिहास, मुगलकालीन इतिहास आदि में भी मानवाधिकारों का स्पष्ट उल्लेख है। अकबर ने अपनी धार्मिक नीति और **'दीन–ए–इलाही'** के द्वारा जनता को धार्मिक सहिष्णुता की प्रेरणा दी। इस काल में भक्ति–आंदोलन का लक्ष्य भी धार्मिक भेदभाव को मिटाकर सबके साथ प्रेम एवं सहयोग करना था। भारत का आधुनिक युग नये भारत के उदय का युग है। मध्यकालीन सामाजिक बुराइयाँ जैसे–सती प्रथा, बाल विवाह, जाति–प्रथा तथा अन्य अमानवीय कुप्रथाओं के विरूद्ध इस युग में मानवतावादी आन्दोलन शुरू हुआ। राजा राममोहन राय, स्वामी दयानन्द सरस्वती, स्वामी विवेकानंद, ज्योतिबा फुले, नारायण गुरू, डॉ. भीमराव अम्बेडकर एवं महात्मा गाँधी जैसे धार्मिक एवं समाज सुधारकों ने मानव की गरिमा को स्थापित करने के लिए सतत् संघर्ष किया।

ब्रिटिशकाल में भी मानवाधिकारों का उल्लेख मिलता है। इसी काल में 1928 में नेहरू रिपोर्ट में भी मानवाधिकारों के लिए आवाज उठायी गयी थी। भारत की स्वतंत्रता के लिए संघर्ष केवल आजादी के लिए नहीं था, बल्कि यह संघर्ष मानव अधिकारों और मानवता के लिए संघर्ष था। इसमें केवल राजनीतिक आजादी की माँग ही नहीं, अपितु सामाजिक और आर्थिक आजादी की माँगे भी थीं। स्वतंत्र भारत के नीति–निर्माताओं ने देश में मानवाधिकारों का समर्थन करते हुए राज्य के लोक कल्याणकारी सिद्धान्त को अपनाया है। सामाजिक राजनीतिक, आर्थिक रूप से व्याप्त गहरी विषमता को कम करना, मानव अधिकार एवं गरिमा के लिए अनिवार्य है। यह भारत के समक्ष गहरी चुनौती है।

मानवाधिकार व्यक्तियों के सार्वांगीण विकास के लिए महत्वपूर्ण है। भारत का संविधान मूल्य अधिकारों के लिए प्रावधान करता है। भारत का संविधान के अनुसार भारत का सर्वोच्च न्यायालय इन अधिकारों का संरक्षण एवं रक्षा करता है। संविधान में कुछ प्रावधानों द्वारा कुछ राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक अधिकारों की मान्यता दी गई है भारत का सर्वोच्च न्यायालय मौलिक अधिकार को प्राकृतिक अधिकार मानता है।

मानवाधिकार का घोषणा पत्र यह भी जिम्मेदारी देता है कि सभी व्यक्ति, राष्ट्र और अन्तर्राष्ट्रीय निकाय इन मानवाधिकारों का सम्मान और निरीक्षण करता है। लेकिन दुनिया के कई देशों में अक्सर मानवाधिकारों का हनन पाया जाता है। विभिन्न देशों में अपने–अपने क्षेत्र में मानवाधिकारों की सुरक्षा के लिए अपना

मानवाधिकार आयोग स्थापित किया है। एक मजबूत जनमतों के साथ मानवाधिकारों के पक्ष में समर्थन दिया गया है जिसके लिए कोई भी सरकार आसानी से उन्हें दबा नहीं सकती।

मानव अधिकारों के सिद्धांत

(Theory of Human Rights)

मानव अधिकार मानवीय स्वभाव में प्रारंभ काल से लेकर अन्तर्निहित हैं तथा इन अधिकारों की अनिवार्यता मानव व्यक्तित्व के समग्र विकास के लिए सदैव से रही है। मानव अधिकारों के विस्तृत अध्ययपक रने हेतु इसके विविध सिद्धान्तों को समझना आवश्यक है। **मानवाधिकार के सिद्धान्तों को मुख्यतः**

दो भागों में विभाजित किया जाता है–

(I) सैद्धान्तिक या दार्शनिक सिद्धान्त से संबंधित दृष्टिकोण।

(II) उपयोगितावादी या व्यवहारवादी सैद्धान्तिक दृष्टिकोण।

(I) सैद्धान्तिक या दार्शनिक सिद्धान्त से सम्बन्धित दृष्टिकोण

(Theoratical or Philosophical Principle Related View)–

इस दृष्टिकोण के अन्तर्गत विभिन्न दार्शनिकों द्वारा सिद्धान्त रूप में मानवाधिकार की व्याख्या की गई है। ये सभी सिद्धान्त मूल रूप में मानवाधिकार के अर्थ और व्याख्या को स्पष्ट करते हैं। भले ही इस दृष्टिकोण में सिद्धान्तों का पहलू प्रकृति प्रदत्त अधिकार हो

या कानूनजन्य, यहाँ तक कि व्यावहारिकता से सम्बन्धित होने के कारण इसे सिर्फ सिद्धान्त रूप से ही ग्राह्म किया जाता है। ये सिद्धान्त निम्नानुसार हैं–

1. प्राकृतिक अधिकारों का सिद्धान्त

(Theory of Natural Rights)

प्राचीन काल में और मध्यकाल में प्राकृतिक अधिकारों की चर्चा की गई है। 17वीं तथा 18वीं शताब्दी में सामाजिक समझौता सिद्धांत के समर्थको– हॉब्स, लॉक, तथा रूसों ने प्राकृतिक अधिकारों का प्रबल समर्थन किया। यह मानवाधिकारों की प्रकृति के बारे में सबसे लोकप्रिय सिद्धान्त है। इस सिद्धान्त का सबसे बड़ा समर्थक ब्रिटिश विचारक जॉन लॉक था। इस सिद्धान्त के अनुसार– ''व्यक्ति को कतिपय अधिकार जन्म से ही प्राप्त होते हैं तथा राजनीतिक व्यवस्था व समाज का उदेश्य इन अधिकारों का अनुपालन सुनिश्चित करना है।'' लॉक ने व्यक्ति के तीन प्राकृतिक अधिकार बतलाये हैं– जीवन का अधिकार, स्वतंत्रता का अधिकार तथा संपत्ति का अधिकार। उसके अनुसार व्यक्ति को ये तीनों अधिकार जन्म से प्राप्त होते हैं तथा राज्य का निर्माण इन अधिकारों की रक्षा के लिये किया जाता है। ये अधिकार सभी व्यक्तियों को समान रूप से जन्म से प्राप्त होते हैं। लॉक के इस सिद्धान्त से प्रभावित होने के कारण मानव अधिकारों को भी प्राकृतिक माना गया है।

सिसरों ने कहा था कि ''व्यक्ति के अधिकार प्रकृति की देन है, इन्हें सिद्ध करने की आवश्यकता नहीं है।''

हॉब्स के अनुसार–''प्राकृतिक अधिकार प्रत्येक व्यक्ति को अपनी शक्ति की स्वेच्छानुसार प्रयोग करने की स्वतंत्रता है।''

इस प्रकार रूसो, रामसपेन, जैक्सन आदि अनेक ऐसे विद्वान है जिन्होने प्राकृतिक अधिकार का समर्थन किया।

2. पारस्परिकता के नियम का सिद्धान्त

(Theory of Reciprocity law)

पारस्परिकता के नियम को मानव व्यवहार का **गोल्डेन नियम** (Golden Rule) माना जाता है। पारस्परिकता का तात्पर्य है कि हमें दूसरे के साथ वैसा व्यवहार करना चाहिये जैसे व्यवहार की हम दूसरों से अपेक्षा करते हैं। यह एक नैतिक सिद्धान्त है जो विश्व के सभी धर्मों में पाया जाता है। विश्व धर्म संसद के 1993 के सम्मेलन में भी इस सिद्धान्त को मान्यता प्रदान की गयी है। इस सिद्धान्त के अनुसार हम दूसरे व्यक्तियों के उन अधिकारों को मान्यता प्रदान करते हैं जिनको हम अपने लिए भी वांछनीय समझते हैं। उदाहरण के लिये यदि हम स्वयं स्वतंत्रता चाहते हैं तथा अपने साथ दूसरों से समान व्यवहार की अपेक्षा रखते हैं तो हमें भी दूसरों के स्वतंत्रता व समानता के अधिकार को मान्यता देनी चाहिये। इसी आधार पर मानच अधिकार सभी को प्राप्त हैं तथा क्योंकि सभी इन अधिकारों को चाहते हैं।

3. साधन सिद्धान्त

(Instrumentsl Theory)

इस सिद्धान्त के अनुसार– मानव अधिकार इसलिए आवश्यक हैं, क्योंकि ये मानवीय कल्याण के महत्वपूर्ण साधन हैं। इस सिद्धान्त का तर्क है कि मानव अधिकार जैसे स्वतंत्रता, समानता अथवा आजीविका पाने का अधिकार व्यक्ति के विकास व कल्याण के लिये आवश्यक हैं। इन अधिकारों के बिना न तो व्यक्ति अपना विकास कर सकता है और न ही मानव कल्याण को सुनिश्चित किया जा सकता है। इस प्रकार मानव अधिकार मानव कल्याण की आवश्यक शर्त होने के कारण आवश्यक हैं।

4. हित सिद्धान्त

(Interest Theory)

इस सिद्धान्त के अनुसार– व्यक्ति, राज्य तथा समाज इन अधिकारों का सम्मान इसलिए करते हैं कि यह उनके और समाज के हित में हैं। प्रसिद्ध भारतीय विद्वान नीरज नाथवानी के अनुसार राज्य तथा सरकार इन अधिकारों का सम्मान इसलिए करते हैं, क्योंकि ऐसा करके वे जनता के विरोध और असंतोष से बच जाते हैं। यदि सरकार मानवाधिकारों को लागू नहीं करती है अथवा इनका उल्लंघन करती है तो जनता में असंतोष होगा तथा सरकार को भारी विरोध का सामना करना पड़ेगा। अतः मानवाधिकारों का अस्तित्व इसलिये है कि ये अधिकार व्यक्ति, समाज तथा राज्य हित में हैं।

5. मानव सुरक्षा का दृष्टिकोण

(Human Security Approach)

वर्तमान में मानव सुरक्षा का दृष्टिकोण अत्यन्त लोकप्रिय हो रहा है। वस्तुतः सुरक्षा का परम्परागत दृष्टिकोण राज्यों की सुरक्षा पर आधारित रहा है। इसके विपरीत सुरक्षा का आधुनिक दृष्टिकोण यह मानता है कि राज्यों की सुरक्षा से अधिक महत्वपूर्ण है उसके व्यक्तियों की सुरक्षा। मानव सुरक्षा दृष्टिकोण सुरक्षा की राज्य केन्द्रित धारणा के विपरीत एक व्यापक धारणा का समर्थन करता है। इसमें मानव तथा उसकी सुरक्षा को राज्य तथा उसकी सुरक्षा से अधिक महत्वपूर्ण माना गया है। मानव सुरक्षा दृष्टिकोण में यह माना जाता है कि मानव अधिकारों का पालन मानव सुरक्षा की पूर्व शर्त है। दूसरे शब्दों में यदि व्यक्तियों के मानवाधिकारों का उल्लंघन होता है तो व्यक्ति सरक्षित नहीं होंगे, भले ही राज्य अपनी सैनिक शक्ति के बल पर स्वयं की सुरक्षा सुनिश्चित कर ले।

(6) अधिकार का आदर्शवादी सिद्धान्त

(Idealistic theory of rights)

सभी अधिकारों के सिद्धान्त में यह सिद्धान्त अधिक श्रेष्ठ माना गया है। मानवाधिकार के इस सिद्धान्त में आदर्शवादी तत्वों की प्रमुखता होती है जो मानव के आन्तरिक विकास और उसकी पूर्ण अन्तः शक्ति पर बल देते हैं। आदर्शवादी सिद्धान्त को इसी के परिणामस्वरूप व्यक्तित्व का सिद्धान्त भी कहा जाता है। आदर्शवादी सिद्धान्त के विचारक इस सिद्धान्त को सर्वोच्च एवं आत्यन्तिक मानते

हैं। आदर्शवादी सिद्धान्त मूल अधिकार से व्युत्पन्न होते हैं। इस सिद्धान्त के अनुसार व्यक्ति के जीवन के आदर्श है—अपने व्यक्तित्व का विकास करना इस आदर्श की प्राप्ति के लिए जो कुछ उसे प्राप्त होना चाहिए वह उसका अधिकार है।

आदर्शवादी अधिकार सिद्धान्त के अनुसार अधिकार की निम्नलिखित विशेषताएँ हैं—

(i) अधिकार व्यक्ति की मांग है।

(ii) इस मांग का उद्देश्य व्यक्तित्व का पूर्ण विकास है।

(iii) कोई मांग समाज द्वारा स्वीकृत होने पर ही अधिकार कहलाती है।

(iv) व्यक्ति और समाज का कल्याण परस्पर विपरीत नहीं है बल्कि एक ही है।

(v) अधिकार में कर्तव्य समाहित है।

(vi) व्यक्ति की प्रत्येक मांग अधिकार नहीं बन सकती। केवल वही मांग अधिकार के रूप है जो नैतिक है।

(7) अधिकारों का मार्क्सवादी सिद्धांत

(Marxist theory of rights)

इस सिद्धान्त का प्रतिपादन कार्ल मार्क्स, एंजेलस और लेनिन ने किया है। मार्क्स के अनुसार–''अधिकार वास्तव में पूँजीपति समाज की अवधारणा है जो शासक वर्ग को और मजबूत बनाती है।'' राज्य स्वयं में एक शोषणपरक संस्था है अतएव पूँजीवादी समाज एवं राज्य में अधिकार वर्गीय अधिकार हैं।

मार्क्स का दृढ़ विश्वास था कि मानव अधिकार एक वर्गहीन समाज में पैदा और जीवित रह सकता है। इस तरह का समाज वैज्ञानिक समाजवादी विचारों के अनुसार ही बनाया जा सकता है। समाजिक एवं आर्थिक अधिकार इस सिद्धान्त के लिए अधिक महत्वपूर्ण है। मार्क्स के अनुसार–किसी समाज में अधिकारों का स्वरूप और चरित्र उस समाज की आर्थिक व्यवस्था पर निर्भर करता है। मार्क्सवाद के अनुसार–राजनितिक स्वतंत्रता आर्थिक स्वतंत्रता की अनुपस्थिति में अव्यवहारिक है। सिद्धान्त जहां समान्य वर्ग कुछ पूंजीपतियों की तानाशाही के अधिन हो वहां अधिकारों की चर्चा एक कल्पना मात्र होती है क्योंकि मार्क्स के मत के अनुसार जिनके पास अधिक शक्ति है, राजनितिक शक्ति का उपयोग भी वही करता है।

मार्क्सवादी व्यवस्था में निम्न विभिन्न आधार को शामिल किया गया है–

(i) **कर्तव्य आधार**– अधिकारों का अर्थ कर्तव्य की दुनिया में समझा गया है।

(ii) **राज्य आधार**– अधिकार राज्य के हस्तक्षेप पर निर्भर करते है।

(iii) **आर्थिक आधार**– जब तक कोई व्यक्ति आर्थिक रूप से स्वतंत्र न हो तब तक नागरिक स्वतंत्रता की प्राप्ति दुर्लभ है।

(iv) **समाजवादी आधार**– मार्क्स के अनुसार नागरिक अधिकारों का आधार आर्थिक व्यक्ति न हो कर समाजवादी व्यवस्था है जो नियोजित अर्थ व्यवस्था पर आधारित है।

(II) उपयोगितावादी या व्यवहारवादी सैद्धान्तिक दृष्टिकोण

(View based on utility or practice theory)–

उपयोगितावादी दृष्टिकोण मानवाधिकारों का व्यावहारिक दृष्टिकोण वाला सिद्धान्त है। इस सिद्धान्त के अनुसार मानवाधिकार की सम्मत सूची में से 'मानव अधिकार' को जानने का प्रयास करना चाहिए। उदाहरण के लिए भारतीय संविधान के भाग 3 में मूल अधिकारों की परिभाषा नहीं दी गई है, अपितु इनकी एक सूची दी गई है। इस सम्मत सूची से ही मूल अधिकार का आशय निकाल लिया जाता है। इसी सन्दर्भ में थॉमस बर्जेन्थाल का मानना है कि मानव अधिकारों की सम्मत सूची में मानवाधिकार का आशय अन्तर्विष्ट है। इसी सूची से हमारा परिभाषात्मक मार्गदर्शन होना चाहिए ताकि अन्तराष्ट्रीय समुदाय 'मानव अधिकारों' और मूल स्वतंत्रताओं के सन्दर्भ में जानकारी प्राप्त कर सके।

मानवाधिकार के प्रकार
(Type of Human Rights)

आधुनिक समय में अलग–अलग राजनैतिक व्यवस्थाओं को भिन्न–भिन्न प्राप्त होते हैं। उदारवादी लोकतांत्रिक व्यवस्था में जहां नागरिक एवं राजनैतिक अधिकारों को विशिष्ट महत्व प्रदान किया जाता है। मानवाधिकारों की उक्त सार्वभौमिक घोषणा में पांच प्रकार के मानवाधिकारों को शामिल किया गया है:

(1) नागरिक अधिकार (Civil rights)– नागरिक अधिकारों के अंतर्गत अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता, भ्रमण की स्वतंत्रता, संघ बनाने की स्वतंत्रता, राष्ट्रीय प्राप्त करने की स्वतंत्रता तथा शरण पाने की स्वतंत्रता के अध्किारों को शामिल किया गया है। ये वे अधिकार हैं जो किसी व्यक्ति को नागरिक के रूप में प्राप्त होते हैं। आमतौर पर नागरिक अधिकारों का समावेश प्रत्येक लोकतांत्रिक देश के संविधान अथवा कानूनों में किया जाता है।

(2) राजनीतिक अधिकार (Political rights)– राजनीतिक अधिकारों का सम्बन्ध नागरिकों द्वारा अपने देश की राजनीतिक प्रक्रिया में भाग लेने से है। मानव के राजनीतिक अधिकारों में राजनीतिक व्यवस्था में भाग लेने का अधिकार, चुनाव लड़ने तथा मत देने का अधिकार आदि को शामिल किया गया है। रजनीतिक अधिकार एक लोकतांत्रिक व्यवस्था की स्थापना करने में सहायक हैं। कोई भी समाज इन राजनीतिक अधिकारों के बिना लोकतंत्र होने का दावा नहीं कर सकता है।

(3) आर्थिक अधिकार (Economical rights)– आर्थिक अधिकार व्यक्ति के आर्थिक जीवन से सम्बन्धित हैं। आर्थिक मानवाधिकारों में पर्याप्त जीवन स्तर का अधिकार, सम्पत्ति का अधिकार, विश्राम का अधिकार तथा विपत्ति में सामाजिक सहायता प्राप्त करने का अधिकार आदि को शामिल किया गया है। वास्तविकता यह है कि आर्थिक अधिकारों क बिना राजनीतिक व नागरिक अधिकार भी कोरी कल्पना बनकर रह जाते है।

(4) सामाजिक अधिकार (Social rights)– मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है तथा इस नाते उसे कतिपय मानवाधिकार प्राप्त होते हैं। सामाजिक श्रेणी के मानव अधिकारों में शिक्षा का अधिकार तथा परिवार बसाने के अधिकार को शामिल किया गया है। भारत में भी शिक्षा के अधिकार को 2002 में मौलिक अधिकारों की सूची में शामिल कर लिया गया है।

(5) सांस्कृतिक अधिकार (Cultural rights)– सांस्कृतिक अधिकारों में अपने समुदाय के सांस्कृतिक जीवन में भाग लेने का अधिकार तथा सांस्कृतिक व वैज्ञानिक विकास के फलस्वरूप प्राप्त नैतिक व भौतिक हितों के संरक्षण का अधिकार शामिल हैं। इन सांस्कृतिक अधिकारों के बिना मानव संस्कृति का विकास संभव नहीं है।

अतः कहा जा सकता है कि–'' मानव जीवन के समग्र विकास के लिए सभी अधिकारों की सुरक्षा एवं क्रियान्वयन अनिवार्य है।''

मानवाधिकारों की रक्षा की आवश्यकता

(Need of Protection of Human Rights)

मानवाधिकार प्रकृति द्वारा प्रदत्त अधिकार है, इसलिये समय तथा परिस्थितियों में परिवर्तन होने पर भी अधिकाारों के स्वरूप में विशेष परिवर्तन नहीं होता है। मानवाधिकारों को स्वाभाविक अधिकार भी कहा जाता है। अर्थात् कुछ अधिकार मानवीय स्वभाव का अंग बन जाते हैं। अधिकारों से व्यक्ति को स्वतंत्रता की गारंटी मिलती है, शोषण और अत्याचारों से मुक्ति मिलती है तथा समाज में ऐसे वातावरण का जन्म होता है जिस वातावरण में व्यक्तित्व विकास के समुचित अवसर सभी को प्राप्त होते हैं। अधिकारों के बिना सभ्य समाज की कल्पना हम नहीं कर सकते। निम्न मुद्दों के द्वारा मानवाधिकारों की रक्षा की आवश्यकता अधिक स्पष्ट की जाती सकती:

(1) व्यक्ति के भौतिक, आध्यात्मिक एवं नैतिक विकास के लिये अधिकार आवश्यक होते हैं। अधिकारों के बिना व्यक्ति अपने व्यक्तित्व गुणों का विकास नहीं कर सकता।

(2) प्राकृतिक अधिकारों से मानवाधिकारों की व्यवस्था उत्पन्न हुई है, इसलिये मानवाधिकार नैतिकता पर आधारित है। उनका उल्लंघन प्रकृति और समस्त मनुष्य जाति के विरूद्ध किया गया अपराध माना जाता है। इस अपराध से बचने के लिये मानवाधिकारों की रक्षा करना सभी का कर्तव्य है।

(3) मानवाधिकार शासक वर्ग की सत्ता पर नियंत्रण रखते हैं। फलस्वरूप शासक वर्ग मनमाने तरीके से शासन नहीं कर सकता।

(4) मानवाधिकार व्यक्ति की स्वतंत्रता पर भी नियंत्रण रखते हैं। फलस्वरूप व्यक्ति की स्वतंत्रता और राजनीतिक एवं सामाजिक सत्ता के बीच उचित सन्तुलन बनाये रखना तथा स्वेच्छारिता, अन्याय अत्याचार और अराजकता पर नियंत्रण रखना सम्भव होता है।

(5) मानवाधिकारों से बहुसंख्य वर्ग की तानाशाही पर रोक लगाना और अल्पसंख्य वर्ग के हितों की रक्षा करना सम्भव होता है।

(6) समाज के कमजोर एवं पिछड़े समुदायों को विकास के अवसर मिल सके तथा समाज का कोई भी वर्ग मानवीय अधिकार एवं मूलभूत स्वतंत्रता से वंचित नहीं रहे इसके लिये मानवाधिकारों के रक्षा की व्यवस्था जरूरी है।

(7) मानवाधिकार व्यक्ति–हितों का समाज हितों के स्थान उचित तालमेल स्थापित करते हैं इसलिये विषयमता पर आधारित समाज में मानवाधिकार महत्वपूर्ण बन जाते हैं।

(8) अन्य प्राणीयों से मनुष्य प्राणी की अलग पहचान और श्रेष्ठता बनाये रखने के लिये मानवाधिकार और उनकी रक्षा जरूजी है।

(9) मानवाधिकार समानता के सिद्धांत पर आधारित होते हैं, इसलिये मनुष्य द्वारा निर्मित विशेषधिकार, भेदभाव तथा असमानता समाप्त करना और समानता पर आधारित समाज की रचना करना मानवाधिकारों का मुख्य कार्य है, अतः उनकी रक्षा करना आवश्यक है।

(10) मानवाधिकारों का महत्व स्वयंसिद्ध है। राजनीतिक प्ररणा और आर्थिक सुरक्षा के लिये उनका उपयोग किया जा सकता है। इसलिये उनकी रक्षा जरूरी है।

(11) समाज व्यवस्था के मूल्य तथा उनकी प्राथमिकता निर्धारित करते समय अन्य लोगों के अधिकार को हानि नहीं हो इस हेतु मानवाधिकार बाधक प्रभाव का काम करते हैं।

(12) मानवाधिकारों के सिद्धान्त से यह स्पष्ट होता है कि किसी भी मनुष्य को अधिकारों से वंचित नहीं रखा जा सकता।

(13) प्राकृतिक अधिकारों पर आधारित होने से मानवाधिकार समाज और राज्य के पहले से अस्तित्व में है, इसलिये उनको सीमित करने का अधिकार किसी को नहीं होना चाहिये।

(14) मानव के हितों के लिये मानवाधिकारों की रक्षा करना जरूरी है।

(15) मानवाधिकारों की रक्षा राज्य का दायित्व है, इसलिये नियंत्रक संस्था के रूप में राज्य क कर्तव्य होगा कि वह मानवाधिकारों की रक्षा करे।

मानवाधिकारों का सार्वत्रिक घोष्णा–पत्र और विश्व शान्ति के लिये उसका महत्व

(Universal Charter of Human Rights & its Importance for World-Peace)

दूसरे विश्वयुद्ध में हुई अपरिमित मनुष्हानि और भयावह दुष्परिणामों के फलस्वरूप मानवाधिकारों की रक्षा के लिये किसी विश्वव्यापी संगठन की आवश्यकता महसूस की जाने लगी। इस दिशा में महत्वपूर्ण देशों के नेताओं द्वारा प्रयास किये गये। इन प्रयासों ने संयुक्त राष्ट्र संघ को जन्म दिया। संयुक्त राष्ट्रों के घोषणा–पत्र (चार्टर) में मानवीय सम्मान एवं प्रतिष्ठा का जतन तथा महिला–पुरूषों के समान अधिकारों पर जोर दिया गया जो मानवाधिकारों की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण माना जाता है। विश्व–शान्ति हेतु यह तय किया गया कि मानवाधिकारों की रक्षा करना जरूरी है। संयुक्त राष्ट्र संघ की निर्मित हेतु सन् 19456 के सम्मेलन में उपस्थित प्रतिनिधियों के द्वारा माँग की गयी कि मानवाधिकारों सम्बन्धी विस्तृत घोषणा की जानी चाहिये और उनके रक्षा की उचित व्यवस्था होनी चाहिये। इस माँग के फलस्वरूप संयुक्त राष्ट्रों के चार्टर में मानवाधिकारों का स्पष्ट उल्लेख निम्न प्रकार किया गया:

(1) चार्टर की प्रस्तावना– संयुक्त राष्ट्रों के चार्टर की प्रस्तावना में मौलिक मानवीय अधिकार, मानवीय व्यक्तित्व का सम्मान तथा महिला–पुरूषों के समान अधिकारों के प्रति विश्वास व्यक्त किया गया।

(2) अनुच्छेद–1 के अनुसार मानवाधिकारों के प्रति सम्मान की भावना को बढ़ावा देना तथा जन्म, जाति, धर्म, भाषा, लिंग आदि के द्वारा किसी प्रकार का भेदभाव नहीं करते हुए मूलभूत अधिकारों की वृद्धि के लिये प्रोत्साहन देने की व्यवस्था की गयी।

(3) अनुच्छेद–13 के अनुसार प्रत्येक मनुष्य मानवाधिकार तथा मूलभूत स्वतंत्रताओं का प्रयोग कर सके इस प्रकार की व्यवस्था महासभा द्वारा की जानी चाहिये।

(4) अनुच्छेद–55–56 में मानवाधिकार तथा मूलभूत स्वतंत्रताओं को बढ़ावा देने हेतु सदस्य राष्ट्रों से सहयोग देने की अपील की गयी।

(5) अनुच्छेद–72 के अनुसार उम्मीद की गयी कि संयुक्त राष्ट्रों की आर्थिक एवं सामाजिक परिषद् मानवाधिकारों के लिये कार्य करेगी।

इस प्रकार संयुक्त राष्ट्रसंघ की स्थापना के साथ ही मानवाधिकारों की रक्षा हेतु व्यापक प्रबन्ध किये गये। संयुक्त राष्ट्र के चार्टर में मानवाधिकारों सम्बन्धी जो उपबंध डाले गये उनका पालन करना सदस्य राष्ट्रों का कर्तव्य माना गया। फलस्वरूप अधिकांश सदस्य राष्ट्रों द्वारा मानवाधिकारों की रक्षा हेतु उचित व्यवस्था की गयी।

मानव अधिकारों का सार्वत्रिक घोषणा–पत्र, 1948

(Universal Charter of Human Rights, 1948)

संयुक्त राष्ट्रसंघ की स्थापना के बाद मानवाधिकारों के लिये कुछ ठोस व्यवस्था निर्मित करने हेतु एक आयोग बनाया गया। 10 दिसम्बर, 1948 को संयुक्त राष्ट्रसंघ की महासभा ने **'मानवाधिकार**

मसविदे' को अपनी स्वीकृत प्रदान करने के पश्चात् मानवाधिकारों का सार्वत्रिक घोषणा–पत्र प्रकाशित किया गया। 10 दिसम्बर, 1948 को घोषणा–पत्र स्वीकृत किया गया। इसलिये प्रतिवर्ष **10 दिसम्बर** को **'मानवाधिकार दिवस'** मनाया जाता है। इस घोषणा–पत्र में 30 धाराएँ हैं जिनमें मानवीय जीवन की विभिन्न समस्याओं पर विचार किया गया। मानवाधिकारों के संदर्भ में घोषणा–पत्र की कुछ मुख्य धाराएँ निम्न प्रकार बताई जा सकती हैं–

(1) प्रत्येक मनुष्य जन्म से स्वतंत्र है तथा दर्जा एवं अधिकारों की दृष्टि से समान है।

(2) प्रत्येक व्यक्ति को अपने अधिकार तथा स्वतंत्रताओं का उपभोग करने का पूरा अधिकार है और जाति, धर्म, भाषा, नस्ल, रंग, जन्मस्थान आदि कारणों से किसी भी व्यक्ति को इस अधिकार से वंचित नहीं किया जा सकता।

(3) किसी भी व्यक्ति को गुलाम नहीं बनाया जा सकेगा।

(4) किसी भी व्यक्ति को क्रूरतापूर्ण अथवा अमानवीय दण्ड या सजा नहीं दी जायेगी।

(5) कानून के समक्ष सभी व्यक्ति समान होंगे और किसी भी व्यक्ति को कानून की सुरक्षा से वंचित नहीं रखा जायेगा।

(6) किसी भी व्यक्ति को गैरकानूनी ढंग से बन्दी नहीं बनाया जा सकता। कैद में नहीं रखा जा सकता अथवा देश से निकाला नहीं दिया जा सकता।

(7) प्रत्येक व्यक्ति अपने अधिकारों की रक्षा हेतु न्यायालय की शरण ले सकेगा।

(8) न्यायालय में अपराध सिद्ध होने तक किसी को भी अपराधी नहीं ठहराया जायेगा।

(9) जिससे किसी की बदनामी होती हो ऐसे सार्वजनिक वक्तव्य अथवा प्राकशनों पर रोक लगानी चाहिए।

(10) किसी के निजी जीवन में अथवा व्यक्तिगत पत्र–व्यवहार में दखल देने का अधिकार किसी को नहीं होगा।

(11) हर व्यक्ति को अपने देश की सीमाओं के भीतर कहीं भी घूमने की अथवा निवास करने की स्वतंत्रता होगी।

(12) हर व्यक्ति को राष्ट्रीयता का अधिकार होगा।

(13) हर वयस्क पुरूष एवं महिला को अपनी पसंद का जीवनसाथी चुनने का, उसके साथ विवाह करने का और अपना परिवार बनाने का अधिकार होगा। राष्ट्रीयता, जाति, धर्म आदि विवाह में बाधा नहीं डाल सकेंगे।

(14) हर व्यक्ति को भाषण, लेखन तथा विचारों के अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता होगी।

(15) हर व्यक्ति को अपनी पसंद का धर्म अपनाने और उस धर्म के अनुसार आचरण करने की स्वतंत्रता होगी।

(16) हर व्यक्ति को शान्तिपूर्वक सभा लेने, संघ अथवा संगठन स्थापित करने का अधिकार होगा, किन्तु इस कार्य के लिये किसी पर भी जबरदस्ती नहीं की जायेगी।

(17) हर व्यक्ति को शासन कार्यों में हिस्सा लेने का और अपनी योग्यता के अनुसार शासन या प्रशासन में उचित स्थान प्राप्त करने का अधिकार होगा।

(18) समाज की एक इकाई के रूप में हर व्यक्ति को सामाजिक सुरक्षा प्राप्त करने का अधिकार होगा।

(19) हर व्यक्ति को काम का, उस काम के बदले उचित परिश्रमिक पाने का, आजीविका के लिये कोई व्यवसाय चुनने का अधिकार होगा। एक जैसे काम के लिये सभी को बिना किसी भेदभाव के समान वेतन दिया जायेगा।

(20) हर व्यक्ति को शिक्षा का अधिकार होगा। व्यक्तित्व का विकास तथा मानवीय अधिकार और मूलभूत स्वतंत्रताओं की रक्षा करना शिक्षा का मुख्य उदेश्य होगा।

(ब) संयुक्त राष्ट्र महासभा द्वारा पारित अन्य मानवाधिकार कानून

मानवाधिकारों द्वारा 1948 में पारित उक्त सार्वभौमिक घोषणा के अतिरिक्त महासभा द्वारा समय–समय पर मानवाधिकारों के अन्य कानून भी पारित किये गये हैं। अभी तक इस प्रकार के नौ मानवाधिकार कानून पारित किये जा चुक हैं। इनका उल्लेख नीचे की तालिका में किया गया है:

क्र. सं.		संधि का नाम	प्रभावी होने की तिथि
1.	आई.सी.ई.आर. डी.	प्रत्येक प्रकार के जातीय भेदभाव को समाप्त करने का अभिसमय	21 दिसम्बर, 1965
2.	आई.सी.सी.पी. आर.	नगरिक और राजनीतिक अधिकारों का अन्तर्राष्ट्रीय अभिसमय	16 दिसम्बर, 1966
3.	आई.सी.ई.एस. सी.आर.	आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों का अन्तर्राष्ट्रीय अभिसमय	16 दिसम्बर, 1966
4.	सी.ई.डी.एस. डब्ल्यू.	महिलाओं के प्रति सभी भेदभावों को समाप्त करने का अभिसमय	18 दिसम्बर, 1979
5.	सी.ए.टी.	उत्पीड़न तथा अन्य अमानवीय व्यवहार अथवा दण्ड विरोधी अभिसमय	10 दिसम्बर, 1984
6.	सी.आर.सी.	बाल अधिकारों का अभिसमय	20 नवम्बर, 1989
7.	आई.सी.आर.एम. डब्ल्यू.	सभी अप्रवासी मजदूरों तथा उनके परिवार के सदस्यों के अधिकारों के संरक्षण का अन्तर्राष्ट्रीय अभिसमय	18 दिसम्बर, 1990
8.	सी.पी.ई.डी.	बाध्यकारी तरीकों से लापता व्यक्तियों के संरक्षण हेतु अन्तर्राष्ट्रीय अभिसमय	20 दिसम्बर, 2006

9.	सी.आर.पी.डी.	विकलांग व्यक्तियों के अधिकारों का अभिसमय	13 दिसम्बर, 2006

इन अधिकारों को विधिक रूप से लागू करने के लिये 1966 में दो अन्तर्राष्ट्रीय सन्धियों पर हस्ताक्षर किये गये। इन सन्धियों को अभिसमय या कानून कहा जाता है। इसी तरह कतिपय विशिष्ट अधिकारों, जैसे–जातीय भेदभाव के विरूद्ध अधिकार, महिलाओं, बच्चों, विकलांगों, अप्रवासी मजदूरों, शरणार्थियों व बन्दियों के अधिकारों के सम्बन्ध में समय–समय पर अलग सन्धियों पर हस्ताक्षर किये गये हैं। इस प्रकार के कुल नौ अभिसमयों पर अभी तक देशों द्वारा हस्ताक्षर किये जा चुके हैं। इन समय–समय पर महासभा द्वारा पारित उक्त नौ प्रकार के अधिकारों तथा मानवाधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा, 1948 को संयुक्त रूप से **मानवाधिकारों की विश्व संहिता** की संज्ञा दी जाती है।

मानव अधिकार के घोषणा–पत्र की कमियाँ
(Drawbacks of the charter of Human Rights)

मानव अधिकारों के घोषणा–पत्र को लेकर कुछ आपत्तियाँ भी उठायी गयी हैं। आलोचकों द्वारा घोषणा–पत्र में **निम्नलिखित कमियाँ** दर्शायी गयी हैः

(1) घोषणा–पत्र कुछ नैतिक मूल्यों की स्थापना करता है, किन्तु उन्हें लागू करने की कोई व्यवस्था नहीं की गयी।

(2) घोषणा–पत्र की शर्तों को भंग करने वाले राष्ट्रों को दण्ड देने की कोई व्यवस्था नहीं है।

(3) घोषणा–पत्र के लिये किसी प्रकार की अन्तर्राष्ट्रीय सन्धि नहीं की गयी।

(4) सदस्य राष्ट्रों द्वारा घोषणा–पत्र का पालन किया जा रहा है अथवा नहीं इसकी निगरानी की कोई व्यवस्था नहीं है।

(5) घोषणा–पत्र के पीछे कानूनी अनुशक्ति का अभाव है।

(6) घोषणा–पत्र कोरे आदर्शों पर आधारित है। प्रयोगशीलता एवं व्यावहारिकता का विचार इसमें नहीं किया गया।

(7) घोषणा–पत्र में दास प्रथा का विरोध किया गया किन्तु बेगार जैसी महत्वपूर्ण समस्या की अनदेखी की गयी।

घोषणा–पत्र में दर्शायी गयी उपरोक्त कमियों के बावजूद इस घोषणा पत्र का एक मूल्य तथा महत्व है। **पामर एवं पर्किन्स** के अनुसार ''प्रस्तुत घोषणा–पत्र केवल आदर्शों को प्रतिपादित करता है। यह कानूनी तौर पर बन्धनकारी समझौता नहीं है तथापि, एक अत्यंत महत्वपूर्ण अन्तर्राष्ट्रीय दस्तावेज है।''

मानवाधिकारों की उत्पत्ति

(Origin of Human Rights)–

16 जनवरी, 1941 को अमेरिका के राष्ट्रपति रूजवेल्ट ने सर्वप्रथम मानव अधिकारों के शब्द का प्रयोग किया। जिसमें उन्होंने **चार मर्मभूत स्वतंत्रताओं**– (1) वाक् स्वतंत्रता, (2) धर्म स्वतंत्रता, (3) गरीबी से मुक्ति, (4) भय से स्वतंत्रता का सूचीबद्ध वर्णन किया।

इसके पश्चात् 'मानव अधिकारों' पद का प्रयोग अटलांटिक चार्टर में किया गया था। तदनुरूप मानव अधिकारों पद का लिखित प्रयोग संयुक्त राष्ट्र चार्टर में पाया जाता है, जिसको द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात् सैन फ्रांसिस्को में 25 जून, 1945 को अंगीकृत किया गया था। उसी वर्ष में अक्टूबर माह में बहुसंख्या में हस्ताक्षरकरर्त्ताओं ने इसका अनुसमर्थन कर दिया। संयुक्त राष्ट्र चार्टर की उदेशिका में घोषणा की गयी कि अन्य बातों के साथ–साथ संयुक्त राष्ट्र का उदेश्य 'मूल मानव अधिकारों के प्रति निष्ठा को पुनः अभिपुष्ट करना.. ....' होगा। तदुपरांत संयुक्त राष्ट्र चार्टर के अनुच्छेद 1 में कहा गया है कि संयुक्त राष्ट्र क 'प्रयोजन'.....''.....मूलवंश, लिंग, भाषा या धर्म के आधार पर विभेद किये बिना मानव अधिकारों और मूल स्वतंत्रताओं के प्रति सम्मान अभिवृद्धि करने और उसे प्रोत्साहित करने के लिए अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग ..... प्राप्त करना'' होंगे। संयुक्त राष्ट्र का मानवाधिकार घोषणा–पत्र धीरे–धीरे समयानुसार विकसित होता चला गया जो निम्नानुसार है–

1. मानव अधिकारों की सार्वभौम घोषणा– अनेक मानव अधिकारों के निर्माण करने में पहला ठोस कदम संयुक्त राष्ट्र महासभा ने दिसम्बर 1948 में 'मानव अधिकारों की सार्वभौम घोषणा' को अंगीकृत करके किया। आशय यह था कि इसका अनुसरण 'अन्तर्राष्ट्रीय बिल ऑफ राइट्स' द्वारा होगा, जो कि प्रसंविदा करने वाले पक्षकारों पर वैध रूप से आबद्धकर होगा।

2. 1966 की अन्तर्राष्ट्रीय प्रसंविदाएँ– कुछ भी हो, सार्वभौम घोषणा केवल आदर्शों के कथन के रूप में क्रियाशील रही, जिसका स्वरूप वैध रूप से आबद्धकर प्रसंविदा के रूप में नहीं था और इसके प्रवर्तन के लिए कोई तंत्र नहीं था। इस कमी को दूर करने का प्रयास संयुक्त राष्ट्र महासभा ने दिसम्बर, 1966 में मानव अधिकारों के पालन के लिये दो प्रसंविदाएँ अंगीकृत करके किया–

(a) सिविल और राजनीतिक अधिकारों पर संविदा,

(b) आर्थिक, सामाजिक और संस्कृति अधिकारों पर प्रसंविदा।

3. यूरोपीय अभिसमय– सार्वभौम घोषणा और 1966 की दोनों अंतर्राष्ट्रीय प्रसंविदाओं के बीच में सार्वभौम घोषणा का सामूहिक कार्यान्वयन राज्यों के एक समूह द्वारा जो यूरोप की परिषद के सदस्य थे, मानव अधिकार के संरक्षण के लिए 1950 में मानव अधिकार पर यूरोपीय अभिसमय की अंगीकार करके किया था। यद्यपि यूरोप के बाहर के लोग यूरोपीय अभिसमय के कार्यकरण में प्रत्यक्ष रूप से हितबद्ध नहीं है, क्योंकि अभिसमय में 1959 में मानव अधिकार यूरोपीय न्यायालय की स्थापना की गई। इस न्यायालय का

कृत्य अिभसमय के प्रवर्तन में होने वाले विवादों का निस्तारण करना है और इसके विनिश्चय वैध निर्णय के रूप में सुनाए जाते है। इस विनिश्चयों में अभिसमय के पाठ का निर्वचन अंतर्ग्रस्त रहता है और इस प्रकार वे राष्ट्रीय संविधान के निर्वचन में, जिनमें तदनुरूप मूल अधिकारों की प्रत्याभूति है, महत्वपूर्ण मार्गदर्शन करते हैं।

4. मानव अधिकार अमेरिकी अभिसमय, 1969– लैटिन अमेरिका के राज्यों के लिए यह अभिसमय के पक्षकारों का आबद्धकर हैं। संगठन में अंतर–अमेरिकी मानव अधिकार आयोग भी स्थापित किया है, जिसका उद्देश्य मानव अधिकारों के सम्मान की अभिवृद्धि करना है।

5. कामनवेल्थ के भीतर विकास– अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रसंविदाओं के अंगीकरण के कामनवेल्थ के भीतर जो भी एक आभासी संगठन है मानव अधिकार के संरक्षण के लिए प्रेरित किया। इस बात का अनुभव किया गया है कि कामनवेल्य संगठन के आदर्शों की प्राप्ति तभी हो सकती है जब जातिभेद के सदस्य राष्ट्रों द्वारा पूर्ण रूप से उनके राज्य क्षेत्रों में तथा पारस्परिक सम्बन्धों में अवैध घोषित कर दिया जाये।

6. सिंगापुर घोषणा– कामनवेल्थ देशों की सरकारों के अध्यक्षों ने सिंगापुर में जनवरी, 1971 में एकत्र होकर एक बैठक में अन्य बातों के साथ मानवाधिकारों, की भी घोषणा की जो निम्नानुसार हैं–

1. हम जातीय पक्षपात को मानव जाति के विकास को, जोखिम में डालने वाली भयवाह बीमारी मानते हैं, इसमें से प्रत्येक अपने राष्ट्र में इस बुराई का प्रबल रूप से विरोध करेगा।
2. हम सब प्रकार के औपनिवेशिक प्रभुत्व और जातीय दमन का विरोध करते है और मानव गरिमा तथा समानता के सिद्धान्त के लिए प्रतिबद्ध है।
3. हम सर्वत्र मानवीय समानता और गरिमा को प्रोत्साहित करने के लिए अपना पूर्ण प्रयास करेंगे। इस विवेचन से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि मानव अधिकारों की आधुनिक रूप से उत्पति अंतर्राष्ट्रीय विधि में हुई है।

मानवाधिकार की जागरूकता की आवश्यकता

(Need of Awareness of Human Rights)

वर्तमान में मानवाधिकारों का महत्व दिनोंदिन बढ़ता जा रहा है। इसके विपरीत आधुनिक युग वैज्ञानिक युग होने के कारण औद्योगिक विकास एवं उन्नति के साथ–साथ मानवीय मूल्यों का लगातार पतन होता जा रहा है। दूरसंचार के साधनों के विकास के साथ ही पड़ोसी राष्ट्र समीप आते जा रहे हैं जिस कारण परस्पर आक्रमण, हिंसा, आतंकवाद, हथियारों की होड़, सम्राज्य विस्तार की लिप्सा की भावना से पीड़ित होकर दूसरे राष्ट्र पर अपनी धाक जमाकर स्वयं को शक्तिशाली प्रदर्शित करना चाहते हैं एवं विकासशील देशों की

श्रेणी में सम्मिलित होना चाहते हैं। इसके परिणामस्वरूप आतंकवाद, जनसंख्या–विस्फोट के कारण उत्पन्न समस्याएँ, अशिक्षा, बेरोजगारी, गरीबी, आर्थिक असमानता, अन्याय, अपहरण, शोषण, उत्पीड़न, भय, भ्रष्टाचार, दुराचार, बलात्कार, तलाक आदि कुत्सित भावनाओं की निरन्तर वृद्धि होती जा रही है। मानव मूल्यों में सतत पतन के कारण सामाजिक जीवन की सुख–शांति विश्रृंखलित हो उठी है।

इक्कीसवीं सदी में सम्पूर्ण मानव जाति एक परिवार के समान जीवन–यापन करना सीखे जिसमें समाज का प्रत्येक मनुष्य आत्मसम्मान, परस्पर प्रेम, त्याग, सेवा की भावना, नारी के प्रति आदर, बालकों के प्रति दयाभाव, विश्वबंधुत्व, सत्य, अहिंसा, प्रेम, सुख–शांति से रहना सीखें। आज के समय में वही व्यक्ति उन्नति कर सकेगा जिसने सही जीवन जीने की कला सीख ली है। आज ऐसी शिक्षा व्यवस्था की आवश्यकता है जिसमें उत्तम नागरिक निर्मित करने का प्रावधान हो। बालकों में जागरूकता पैदा हो और वे स्वयं के बारे में निर्णय ले सकें। इस दिशा मे अमल हेतु 1995 से 2004 को संयुक्त राष्ट्र दशक घोषित किया गया था। 1995 से ही मानव अधिकार शिक्षा की दिशा में एक प्रचण्ड अभियान चलाया गया। इस अभियान के तहत राष्ट्रीय एवं राज्य स्तरीय मानव अधिकार आयोग ने कई महत्वपूर्ण निर्णय लिये।

संयुक्त राष्ट्रसंघ के घोषणा–पत्र में स्पष्ट किया गया है कि यद्यपि हमें 21वीं शताब्दी में पृथ्वी पर मानव जीनव बचाना है तो आने वाली पीढ़ी को युद्ध की भयंकरता से बचाना, मानव मूल्यों की स्थापना करना, एकता कायम करने के लिए प्रत्येक मनुष्य को शिक्षा

तथा मानव अधिकारों के मूलमंत्रो को आत्मसात करना होगा तब ही हम समष्टि के कल्याण की कल्पना कर सकेंगे।

भारतीय संविधान में मानव अधिकार शिक्षा का प्रावधान (Amendment for Human Right Education in Indian Constitution)

भारत जैसे विशाल देश में जिसका आकार किसी महाद्वीप से कम नहीं है, जीवन का हर पहलू किसी न किसी रूप में मानव अधिकारों से जुड़ा है। ऐसी भारतीय संस्कृति सदैव से ही मानव अधिकारों की पोषक रही है, जिसके विभिन्न प्रमाण हमें वेद, पुराण, गीता, रामायण, महाभारत आदि ग्रंथों में मिलते हैं। हमारी संस्कृति में अधिकार और कर्त्तव्यों का प्रायोगिक रूप दृष्टिगोचर होता है। भारतीय शासन व्यवस्था में लोकतंत्र को अपनाया गया है। एक व्यवस्था के रूप में लोकतंत्र व्यक्ति को आत्मसम्मान के साथ जीवन–यापन का अवसर प्रदान करता है। वह व्यक्ति को आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक सहित सभी प्रकार के मानव अधिकारों के उपयोग का अवसर प्रदान करता है।

मानव अधिकारों के प्रति संचेतना जागृत करने का मुख्य स्त्रोत शिक्षा ही हो सकती है। शिक्षा मानव की बुनियाद आवश्यकताओं में से एक है। यदि शिक्षा को मानव अधिकार से जुड़े मुद्दों जैसे सामाजिक, सांस्कृतिक आर्थिक और राजनीतिक संदर्भ के साथ जोड़ दिया जाये तब ही मानव अधिकारों का संरक्षण सम्भव है। हमारे देश के सर्वोच्च न्यायालय सुप्रीम कोर्ट ने अपने ऐतिहासिक निर्णय

(उन्नीकृष्णन विरूद्ध आंध्रप्रदेश (1993) एस सी 645) में देश के 14 वर्ष तक के हर बच्चे के प्राथमिक शिक्षा के अधिकार को मौलिक अधिकार के रूप में माना है। मानव अधिकार आयोग ने 1993 में अपनी स्थापना के तुरन्त बाद से ही देश में मानवाधिकारों की शिक्षा के प्रचार एवं प्रसार को अपना मुख्य उदेश्य बना लिया था। स्कूली स्तर पर इस विषय को पाठ्यक्रम में शामिल कराने के लिये राष्ट्रीय शिक्षा एवं अनुसंधान परिषद् (NCERT) का सहयोग लिया। उच्चतम न्यायालय ने पाया कि शासन ने अधिक ध्यान उच्च शिक्षा की ओर देकर वहाँ अधिक धनराशि खर्च की है।

भारतवर्ष में पिछले कुछ वर्षों से मानव अधिकार एवं जागरूकता शिक्षा पर अत्यधिक बल दिया जा रहा है। 1995 से प्रारम्भ हुए मानव अधिकार शिक्षा दशक के साथ ही अनेक संगठन एवं संस्थाओं ने इस कार्य को अपने हाथ में लिया। विश्वविद्यालयीन पाठ्यक्रम के आधारभूत तत्व मानव अधिकार के किसी न किसी आयाम में जुड़े हुए हैं। हमारी राष्ट्रीय शिक्षा नीति में धर्मांधता, हिंसा, अन्धविश्वास एवं भाग्यवादिता के संघर्ष पर बल दिया गया है। यद्यपि पाठ्यचर्या की अवधारणा एवं उद्देश्यों को देखकर ऐसा प्रतीत होता है कि मानव अधिकारों के सैद्धांतिक पक्ष पर अधिक बल दिया है। इतने सब प्रयत्नों के बावजूद व्यावहारिक पक्ष की जो कमी अभी भी रह गयी है उसे हमें पूरा करना अत्यन्त आवश्यक है।

बालक का प्रथम विद्यालय घर होता है, उसके बाद प्राथमिक, माध्यमिक, उच्च माध्यमिक व विश्वविद्यालयीन शिक्षा मिलती है। आवश्यकता है बचपन से ही बालक को उच्च संस्कार देने की, ताकि

आगे चलकर बालक अपने जीवन में सही दिशा की ओर अग्रसर हों, बालक के बचपन में घर से और उसके बाद निम्न प्रकार से मानवाधिकार की शिक्षा दी जा रही है।

(I) प्राथमिक शिक्षा के स्तर पर (At the Primary Eduction Level)– प्राथमिक स्तर पर बालक की उम्र पाँच से ग्यारह या बारह वर्ष तक होती है। बालक के अचेतन मन में अपने परिवार का वातावरण एवं संस्कार उपस्थित रहते हैं। एक पाँच वर्ष के बालक के मन में अपने साथियों के लिये यदि प्रेम, दया, सहयोग एवं सहिष्णुता की भावना है तो वह बालक निश्चित ही परोक्ष रूप से मानव अधिकारों की रक्षा करेगा तथा विद्यालय में अनुशासन बनाये रखेगा। इस आयु में बालक का मन बहुत कोमल होता है और उस पर एक बाल जो संस्कार पड़ गये वो स्थायी हो जाते हैं। इसलिये आवश्यक है कि शिक्षक बालकों को मानव अधिकार से सम्बन्धित शिक्षा प्रचलित शिक्षाप्रद कहानियों, बाल साहित्य एवं पत्र–पत्रिकाओं के माध्यम से दें। पाठ्य पुस्तकों में कुछ चित्रों, कथा या लेख भी विषय से सम्बन्धित जोड़कर बालक को मानव अधिकार आसानी से समझाया जा सकता है। साक्षरता अभियान की तरह ही मानव अधिकार अभियान भी चलाया जाना चाहिये। प्राथमिक कक्षाओं में मानव अधिकार से सम्बन्धित पोस्टर, पेम्पलेट, स्केच आदि वितरित किये जाने चाहिये एवं दीवारों पर भी लगाये जाने चाहिये। इनमें मानव अधिकार क्या है, उनका संरक्षण कैसे करना चाहिये, जैसी बातों का समावेश किया जाना चाहिये। शिक्षा का उदेश्य बच्चे के व्यक्तित्व, प्रतिभा, मानसिक एवं शारीरिक क्षमताओं को पूरी तरह

विकसित करना है। शिक्षा बच्चे को बड़े पैमाने पर समाज में सक्रिया जीवन जीने के लिये तैयार करती है। इसके साथ ही बच्चे के मन में अपने माता–पिता, अपनी भाषा एवं संस्कृति का सम्मान करना सिखलाती है।

11 से 14 वर्ष का बालक जब माध्मिक कक्षाओं में प्रवेश करता है, उसका मन अनेक जिज्ञासाओं एवं आकांक्षाओं से भरा होता है। उस बालक के मन में प्रत्येक वस्तु को जानने एवं समझने की उत्कंठा होती है। इस अवस्था में विद्यार्थियों को बताया जाना चाहिये कि वह मानव अधिकार एवं उनके संरक्षण के लिए किस प्रकार योगदान दे सकते हैं।

(1) सर्वप्रथम बालक को पारिवारिक वातावरण से ही सम्बन्धित श्रेष्ठ उदाहरण देकर विषय को समझाना चाहिये।

(2) महापुरूषों की जीवनियाँ भी प्रेरणा देती हैं।

(3) बालकों को पुस्तकालय से ऐसी पुस्तकें पढ़ने को दी जायें जिनको पढ़कर त्याग, सहनशीलता और ईमानदारी जैसे गुण पैदा हो जायें।

(4) खेलकूद, प्रहसन एवं लघु नाटिकाएँ समय–समय पर आयोजित की जायें।

(5) मानव अधिकार से सम्बन्धित पोस्टर, कविता, निषेध लेखन प्रतियोगिता एवं वाद–विवाद प्रतियोगिताएँ आयोजित करवा सकते हैं।

(6) मेला, ऐतिहासिक स्थल एवं वन की भी सैर करा सकते हैं।

(7) इतिहास के प्रेरक प्रसंग एवं कथाएँ और कविताएँ इस स्तर पर भी सहायक होती हैं।

वास्तव में शिक्षा का प्रारूप कुछ ऐसा हो कि बालक स्वयं ही मानव अधिकार का उल्लंघन नहीं करे एवं न ही किसी को करने दे।

(II) उच्चतर माध्मिक शिक्षा के स्तर पर (At the Higher Secondary Education Level)– बालक युवावस्था की ओर अग्रसर होता हुआ उच्चतर माध्मिक कक्षाओं में प्रवेश करता है। इस अवस्था में बालक इतना परिपक्व हो जाता है कि उसकी स्वयं की सोचने की शक्ति विकसीत हो जाती है। इस अवस्था में अर्जित ज्ञान जीवन पर्यंत उसका सहयोग करता है। अतः इस अवस्था मे मानव अधिकार शिक्षा का स्वरूप पिछली कक्षाओं से कुछ भिन्न होगा। इस स्तर पर निम्न प्रकार से मानवाधिकार की शिक्षा देनी चाहिएः

(1) सर्वप्रथम युवाओं को मानव अधिकारों के प्रति जागरूक करना अति आवश्यक है। पाठ्यक्रम में अलग से विषयवस्तु जोड़ने की बजाय मानव अधिकार से सम्बन्धित जानकारी पाठ्यक्रम में विभिन्न स्थानों पर ही विषय के अनुरूप जोड़कर विद्यार्थियों को पढ़ाया जा सकता है।

(2) मानव अधिकार से सम्बन्धित समस्याओं जैसे–युद्ध, अपहरण, चोरी, हत्या आदि विषयों पर भाषण एवं वाद–विवाद प्रतियोगिता आयोजित की जायें। विषय से सम्बन्धित तत्काल वाद–विवाद

प्रतियोगिता का भी आयोजन कर सकते हैं। इस प्रकार ज्यादा से ज्यादा विद्यार्थियों को अपने विचार प्रस्तुत करने का मौका मिलेगा।

(3) अध्यापकों द्वारा पुस्तकालयों से विभिन्न समाचार–पत्र, पुस्तकें एवं पत्रिकाएँ विद्यार्थियों को पढ़ने के लिये देना चाहिये। इनको पढ़कर विद्यार्थियों को देश एवं विदेशों के मानव अधिकार से सम्बन्धित समाचार ज्ञात हो सकेंगे।

(4) महापुरूषों के प्रेरक प्रसंग, जीवनी आदि की जानकारी बालकों को दी जाये। राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय ऐतिहासिक घटनाओं का वितरण देकर बालकों को स्वयं अन्तर स्पष्ट करने को कहा जाये। एक ओर युद्ध की विभीषिका, क्रंदन करते हुए बालक और स्त्रियाँ, लाशों के ढेर और उन पर मंडराते चील और कौए। दूसरी ओर लहलहाते हुए खेत, पनघट पर गीत गाती हुई औरतें और खुशहाल परिवार। बालक स्वयं निर्णय लेंगे कि उनको मानव अधिकार का संरक्षण करना चाहिये या नहीं।

(5) विद्यालय में उपलब्ध शिक्षण सामग्री जैसे–चार्ट, मॉडल, टीवी, टेपरिकार्डर एवं प्रोजेक्ट के द्वारा भी विषय को विस्तार से समझाया जा सकता है।

(6) स्काउट के रूप में भी विद्यार्थी, मानवीय कर्तव्यों एवं अधिकारों का ज्ञान, सेवा एवं सहयोग के माध्यम से प्राप्त कर सकता है। विद्यार्थी मेला और सार्वजनिक उत्सवों में, आकस्मिक घटनाओं एवं प्राकृतिक आपदाओं में **''स्वयं सेवकों''** की भूमिका का निर्वाह कर सकता है।

(III) महाविद्यालयीन शिक्षा के स्तर पर मानव अधिकार संरक्षण हेतु शिक्षा (Education for the Protection of human rights at the collage level):– बालक का विकसित मस्तिष्क स्वस्थ एवं उत्तम विचार रख सकता है। युवा बालक जो विकास की ओर उन्मुख होता है, उसके मन में अनेक सपने, आकांक्षाएँ, अपेक्षाएँ एवं बहुत कुछ करने की अदम्य लालसा होती है। नयी–नयी योजनाएँ उसके मस्तिष्क में जन्म लेती हैं। इस अवस्था में युवा शक्ति को सही दिशा देने की आवश्यकता है। इस अवस्था मे वह मानव जीवन से सम्बन्धित मनन–चिंतन करने में समर्थ हो जाता है। महाविद्यालयीन शिक्षा पूरी करने के पश्चात विद्यार्थी व्यासहारिक क्षेत्र में किसी कर्मचारी, सेवक, व्यवस्थापक प्रबन्धक या अधिकारी के रूप में अपनी सेवाएँ प्रदान करता है। अतः यह अत्यन्त आवश्यक है कि वह जब महाविद्यालय से अपनी शिक्षा पूर्ण करके समाज में आये, उस समय वह मानव अधिकार एवं उसके संरक्षण से पूर्ण रूप से परिचित हो।

मानव अधिकारों के संरक्षण हेतु महाविद्यालयीन स्तर पर जो उपाय आवश्यक प्रतीत होते हैं, वे निम्न हैं–

(1) इस स्तर पर मानव अधिकार से सम्बन्धित ऐसा वाता वरण निर्मित किया जाये जिसमें हर विद्यार्थी अपने अधिकारों के प्रति जागरूक हो सकें।

(2) महाविद्यालय में कला, वाणिज्य एवं विज्ञान तीनों संकाय के विद्यार्थियों के लिये आरम्भिक पाठ्यक्रम में मानव अधिकार शिक्षा से सम्बन्धिन कुछ पाठ सम्मिलित किये जायें।

(3) अन्तर विश्वविद्यालयीन स्तर पर विभिन्न प्रतियोगिताएँ आयोजित की जायें जिनमें वाद–विवाद प्रतियोगिता, नाटक, कविता पाठ, सामूहिक वार्तालाप आदि को शामिल किया जाये।

(4) विशिष्ट व्यक्तियों को समय–समय पर आमंत्रित करके इस विषय पर उकने विचार सुने जायें।

(5) हर संकाय के विद्यार्थियों के लिये मानव अधिकार के सम्बन्ध में शोधपूर्ण कार्यों की व्यवस्था होनी चाहिये।

(6) मानव अधिकार हनन एवं संरक्षण सम्बन्धी समस्याएँ विद्यार्थियों को देकर उनसे तार्किक बहस कराना एवं सुझाव लेना।

(7) व्यावसायिक शिक्षा के पाठ्यक्रमों में भी मानव अधिकार शिक्षा एवं उनका संरक्षण जैसे विषय को शामिल किया जाना चाहिये।

(8) विद्यार्थियों द्वारा गाँव एवं नगरों का भ्रमण कर समस्याओं का अध्ययन एवं कारणों की खोज की जाये।

(9) विभिन्न राष्ट्रीय पर्वों पर महान पुरूषों की जन्मतिथि एवं पुण्यतिथियों पर या शहीदों के शहीद दिवस पर रैलियों का आयोजन कर समाज में जागरूकता उत्पन्न की जाये।

(10) नवाचार गतिविधियों का आयोजन जैसे किशोर कलन, परामर्श कलन, प्रदर्शन आदि जागरूकता का प्रसार किया जाए।

(11) मानव अधिकारों से सम्बन्धित नाटकों का मंथन किया जाये।

(12) शिक्षा के माध्यम से बालकों में उदार एवं शाश्वत गुणों का विकास किया जाये। देश के महान विचारकों द्वारा मानवता के लिये जिन उदार एवं उच्च गुणों एवं मूल्यों का विवेचन किया, उन्हें शिक्षा विश्व की उन्नति के लिए भी चिन्तन कर सके।

(13) विश्व स्तर पर मानव अधिकारों के उल्लंघन एवं संरक्षण पर विचार गोष्ठियों, परिचर्चा का महाविद्यालयीन स्तर पर आयोजन किया जाये।

महाविद्यालयीन पाठ्यक्रम में विश्वबंधुत्व को बढ़ाने वाली सामग्री होनी चाहिये। जाति, धर्म, वर्ग, मजहब या सम्प्रदाय सम्बन्धी संकीर्णता से ऊपर उठकर सार्थक एवं व्यावहारिक शिक्षण की व्यवस्था होना चाहिये। बालकों का एक आदर्श नागरिक के रूप में निर्माण को, इसके लिए बालक को मानव अधिकारों के साथ–साथ अपने मूल कर्तव्यों की भी जानकारी होनी चाहिये।

मानव अधिकार एवं उनका संरक्षण

Human Rights & their protection

मानव अधिकारों का क्षेत्र अत्यंत व्यापक है। संसार के प्रत्येक राज्य/ क्षेत्र आदि में मानवाधिकारों से संबंधित नियम हैं और साथ ही इन मानवाधिकारों के हनन को रोकने के लिए कुछ नियम भी बनाए गए हैं। प्राचीन समय में राजा का प्रथम कर्तव्य होता था कि वह अपनी प्रजा को हर प्रकार से सुरक्षा प्रदान करे एवं उनकी सुख–सुविधाओं का ध्यान रखे। आदर्श नागरिकता, प्रजातंत्र और मानववाद एवं राष्ट्रीय एकता, अंतर्राष्ट्रीय भावना जैसे मूल्य समाज एवं राजनीति दोनों का स्पर्श करते है। अतः व्यक्तियों के मानव अधिकारों के संरक्षण के उद्देश्य से ही किसी भी देश, राज्य या नगर का प्रशासन तंत्र एवं उसकी समस्त शासकीय एवं अशासकीय व्यवस्था की गयी है। संयुक्त राष्ट्र संघ की स्थापना का मुख्य उद्देश्य भी यही था। संयुक्त राष्ट्र ने ''विकास'' को भी मानव अधिकारों की श्रृखला में सम्मलित किया है। मानव अधिकारों का संरक्षण पूर्ण रूप से हो सके इसके प्रयत्न स्वरूप राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग के साथ–साथ राज्यों में भी राज्य मानव अधिकार–आयोगों एवं मानव अधिकारा न्यायालयों का भी गठन किया गया है।

द्वितीय विश्व युद्ध में हुए भयंकर नरसंहार के पश्चात् पानव अधिकारों की रक्षा के लिये संयुक्त राष्ट्र का घोषणा–पत्र प्रस्तुत किया गया। इसमें घोषणा की गयी कि ''वे अपनी आगे वाली पीढ़ियों को युद्ध के दुष्परिणामों से बचाएँगे, मूलभूत मानव अधिकारों

में अपनी आस्था व्यक्त करेंगे और व्यापक स्वतंत्रता के लिए एवं जीवन–स्तर में सुधार लाने के लिए सामाजिक प्रगति को प्रोत्साहित करेंगे।'' संयुक्त राष्ट्र महासभा ने 10 दिसम्बर, 1948 को मानव अधिकारों की सार्वजनिक घोषणा की। प्रत्येक वर्ष 10 दिसम्बर को ''**अंतर्राष्ट्रीय मानव अधिकार दिवस**'' के रूप में विश्व के सभी देशों में मनाया जाता है।

मानव अधिकारों की प्रथम सार्वजनिक घोषणा के 20 वर्षों बाद संयुक्त राष्ट्र ने वर्ष 1968 को ''**अंतर्राष्ट्रीय मानव अधिकार वर्ष**'' घोषित किया। इसी वर्ष तेहरान में मानव अधिकारों पर एक अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन आयोजित किया गया। इन सभी सम्मेलनों में मानवाधिकार के विकास के लिए योजनाएँ बनायी गयी। मानवाधिकारों के घोषणा–पत्रों में तीस अनुच्छेद हैं उनमें से कुछ प्रमुख मानवाधिकार निम्न प्रकार हैं।

(1) प्रत्येक व्यक्ति को अपने विचारों के अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता है।

(2) प्रत्येक व्यक्ति को व्यक्तिगत रूप से अपनी तथा परिवार की सुरक्षा करने का अधिकार है।

(3) किसी को भी शारीरिक यातना नहीं दी जानी चाहिये।

(4) सभी बिना किसी भेदभाव के समान रूप से कानूनी सुरक्षा के अधिकारी हैं।

(5) प्रत्येक व्यक्ति को स्वतंत्रतापूर्वक समाज के सांस्कृतिक जीवन में हिस्सा लेने का अधिकार है।

(6) बच्चों को शिक्षा किस रूप में दी जाये यह माता–पिता का अधिकार है।

(7) प्रत्येक व्यक्ति को शिक्षा पाने का अधिकार है।

(8) प्रत्येक व्यक्ति को अपने देश की सरकारी नौकरियों को प्राप्त करने का पूरा अधिकार है।

(9) प्रत्येक व्यक्ति को किसी देश को छोड़ने और अपने देश में वापस जाने का अधिकार है।

संयुक्त राष्ट्र संघ ने बच्चों की रक्षा एवं विकास को ध्यान में रखकर 54 अनुच्छेदों का घोषणा–पत्र प्रकाशित किया। इनमें से कुछ खास अधिकार यहाँ दिये जा रहे हैं–

(1) प्रत्येक बालक को जीवन जीने का पूर्णतः अधिकार है।

(2) बच्चे को उसकी उचित देखभाल एवं पोषण का अधिकार है।

(3) प्रत्येक बच्चे को स्वास्थ्य सुविधाएँ पाने का अधिकार है।

(4) बच्चे को शिक्षण के समान अवसर पाने का अधिकार है।

(5) प्रत्येक बच्चे को उपने अधिकरों एवं भलाई के लिए कानूनी सुरक्षा लेने का अधिकार है।

संयुक्त राष्ट्र संघ ने दुनियाभर के बच्चों के स्वास्थ्य, शिक्षा और उनकी उचित देखभाल के लिये संयुक्त राष्ट्र बाल कोष की स्थापना की है। इसे **''यूनोसेफ''** के नाम से भी जाना जाता है। संयुक्त राष्ट्र संघ की महासभा ने मानव अधिकारों की घोषणा करके ही अपने कार्य की इतिश्री नहीं समक्षी है बल्कि उसने **''एमनेस्टी इन्टरनेशनल''** नामक संस्था को इस कार्य के लिये लगाया है कि वह सुनिश्चित करे कि विश्व के किन देशों में मानव अधिकारों का सम्मान हो रहा है। और कहाँ पर मानव अधिकरों का उल्लंघन हो रहा, है। इसकी शाखाएँ विश्व के बहुत से देशों में फैली हुई हैं। ये अपने–अपने क्षेत्रों की सूचनाएँ अंतर्राष्ट्रीय संगठन को भेजती है एवं उचित कार्यवाही करने के लिये संयुक्त राष्ट्र संघ से आग्रह करती है।

सयुक्त राष्ट्र महासभा द्वारा 1996 में पारित एक प्रस्ताव के अनुसरण में आर्थिक एवं सामाजिक परिषद में राष्ट्र मानव अधिकार आयोग से प्रार्थना की कि वह इस प्रश्न पर विचार करे कि मानव अधिकारों की अन्तर्राष्ट्रीय प्रसंविदाओं 1966 के कार्य करने हेतु मानव अधिकारों का राष्ट्रीय आयोग स्थापित किया जाए। आयोग ने इस प्रश्न पर 1970 में विचार किया तथा संस्तुति दी कि मानव अधिकार के राष्ट्रीय आयोग की स्थापना की जाए। तब से मानव अधिकार आयोग ने प्रत्येक सदस्य राज्य में राष्ट्रीय आयोग की स्थापना पर बल दिया है मानव अधिकारों के वियना सम्मेलन ने जून 25, 1993 को अपनाए गए वियना घोषणा तथा कारवाही के प्रोग्राम में भी यह संस्तुति दी थी कि प्रत्येक राज्य को मानव अधिकार के उल्लंघन में होने की दशा में एक प्रभाव शाली व्यवस्था उपचार प्रदान करने के

लिए स्थापित करना चाहिए। वियना विश्व सम्मेलन के पश्चात भारत समेत कई राज्यों के मानव अधिकारों के उल्लंघन की सिकायत के उपचार के लिए मानव अधिकारों के राष्ट्रीय आयोग स्थापित की।

पश्चिमी देशों नें भारत के सशस्त्र सेना एवं पुलिस द्वारा मानव अधिकारों के उल्लंघन की जम्मू एवं काश्मीर के मामले में तीव्र आलोचना की है इन आलोचनाओं का जवाब देने हेतु अन्य कारणों के कारण भारत नें मानव अधिकारों की राष्ट्रीय आयोग मानव अधिकारों की सिकायतों उपचार करने हेतु स्थापित करने का निर्णय लिया 28 सितम्बर 1993 को भारत के राष्ट्रपति ने एक अध्यादेश की उदघोषणा द्वारा मानव अधिकारों की राष्ट्रीय आयोग स्थापित किया तब पश्चात मानव अधिकारों के एक बिल को लोक सभा ने 18 दिसम्बर 1993 को पारित किया। मानव अधिकारों के संरक्षण के लिए अधिनियम, 1993 की प्रस्तावना में यह स्पष्ट किया है कि यह अधिनियम मानव अधिकारों के बेहतर संरक्षण के लिए राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग, राज्यों में आयोग तथा मानव अधिकार न्यायालयों की स्थापना तथा उनसे संबंधित मामलों के लिए पारित किया गया।

मानवाधिकार सम्बन्धी भारतीय कानून
(Indian laws Relating to Human Rights)

(1) भारत का संविधान : प्रस्तावना, भाग III,भाग IV,IV क, अनुच्छेद 226,300क,325 एवं 326

(2) मानवाधिकार संरक्षण अधिनियम,1993
(3) अनुसूचित जातियों एवं अनुसूचित जनजातियों का राष्ट्रीय आयोग (संविधान के अनुच्छेद 338 के अन्तगर्त)

(4) अल्पसंख्यकों के लिए राष्ट्रीय आयोग, (1992 के अधिनियम के अन्तगर्त)

(5) राष्ट्रीय महिला आयोग (1990 के अधिनियम के अन्तगर्त)

(6) नागरिक अधिकार संरक्षण अधिनियम,1955

(7) अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति (अत्यचार निवारण) अधिनियम, 1989

(8) इम्मोरल ट्रेफिक (प्रिवेंशन) एक्ट, 1956

(9) दहेज प्रतिषेध अधिनियम,1961

(10) सती (रोक) अधिनियम, 1987

(11) मातृत्व सुरक्षा अधिनियम,1961

(12) बाल विवाह (प्रतिषेध) अधिनियम,1929

(13) जाति निर्योग्यता निवारण अधिनियम,1950
(14) बंधुआ मजदूर (प्रथा) समाप्ति अधिनियम,1976

(15) भारतीय दण्ड प्रक्रिया संहित,1973
(धारा–46,47,49,50,51,54,56,57,58,100,160,167,207,303,)

(16) भारतीय दण्ड संहिता,1860(धारा 330,345)

(17) भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872(धारा 24,25,26,101)

भारतीय संविधान के विविध अनुच्छेदों मे मानवाधिकार
(Human Raights in different Articles of Indian Constitution)

1. अनुच्छेद28 कुछ शिक्षा संस्थाओं में धार्मिक शिक्षा या धार्मिक उपासना में उपस्थि होने की स्वतंत्रता।

2. अनुच्छेद 29 अल्पसंख्यक वर्गों के हितों का संरक्षण।

3. अनुच्छेद 30 शिक्षण संस्थाओं की स्थापना और प्रशासन करने का अल्पसंख्यक वर्गों को अधिकार।

4. अनुच्दछेद 32 मौलिक अधिकारों को प्रवर्तित कराने के लिए उपचार का अधिकार।

अन्तर्राष्ट्रीय मानव अधिकार संस्थाएँ

International Human Rights Organisations

मानवाधिकार यह विश्व के प्रत्येक राष्ट्र में फैल चुका है, जबकि इसका प्रारंभ संयुक्त राष्ट्र संघ ने अपने कार्यों के सरलीकरण हेतु विविध संस्थाओं व आयोगों का निर्माण किया है; जिनमें से कुछ प्रमुख निम्नानुसार है–

(1) मानव अधिकार आयोग– संयुक्त राष्ट्र चार्टर के अनुच्छेद 68 में उपबन्ध किया गया है कि आर्थिक और सामाजिक परिषद आर्थिक और सामाजिक क्षेत्रों में तथा मानव अधिकरों की अभिवृद्धि के लिए आयोग और ऐसे अन्य आयोगों की स्थापना कर सकता है। जो परिषद के कार्यों के पालन के लिए आवश्यक हैं। आयोग द्वारा आर्थिक व सामाजिक परिषद के अंतर्गत सात आयोगों की स्थापना भी की गई है ये हैं–

1. मानव अधिकार आयोग,
2. सांख्यिकी आयोग,
3. जनसंख्या आयोग,
4. सामाजिक विकास आयोग,
5. स्त्री प्रास्थिति आयोग,
6. नार्कोटिक औषधि आयोग, और
7. अपराध निवारण और दण्ड न्याय आयोग।

मानव अधिकार आयोग की संरचना एवं कार्यकरण– मानव अधिकार आयोग की स्थापना **16 फरवरी, 1946** को आर्थिक और सामाजिक परिषद के एक प्रस्ताव द्वारा की गई जिसका उसी माह में महासभा द्वारा अनुमोदन कर दिया गया जिसमें **18 सदस्य** थे। प्रत्येक सदस्य राज्य ने ही अपने प्रतिनिधियों का चयन किया था, किन्तु समयानुक्रम में इसके सदस्यों की संख्या बढ़ती गई और

वर्तमान समय में इसमें 32 सदस्य सरकारें हैं। वर्तमान में ये सभी निम्नलिखित विषयों पर रिपोर्ट तैयार करती हैं।

1. अन्तर्राष्ट्रीय अधिकार पत्र,

2. सिविल स्वतंत्रता प्रसंविदाओं, स्त्रियों की प्रास्थिति, सुचना की स्वतंत्रता और तदनुरूप विषयों अन्तर्राष्ट्रीय घोषणा,

3. अल्पसंख्यकों का संरक्षण, और

4. मूलवंश, लिंग, भाषा या धर्म के आधार पर विभेद निवारण।

उपयोग को अध्ययन करवाने, सिफारिशें करने और नई अन्तर्राष्ट्रीय संधियों का प्रारूप तैयार करने के लिए सशक्त किया गया है। इसके अतिरिक्त, यह मानव अधिकार उल्लंघन के अभिकथनों का अन्वेषण कर सकता है तथा विस्तृत उल्लंघन के साक्ष्य दिये जाने पर कार्रवाई कर सकता है। आयोग ने अपना कार्य जनवरी, 1947 में श्रीमती फ्रैंकलिन डी. रूजवेल्ट की अध्यक्षता में प्रारंभ किया। अपने प्रथम सत्र में मानव अधिकार आयोग ने विभेद निवारण और अलपसंख्यक संरक्षण उप आयोग की स्थापना की जो स्वतंत्र विशेषज्ञों का निकाय है। आयोग ने मानव अधिकार की सार्वभौम घोषणा के आधार पर आयोग ने सिविल और राजनैतिक अधिकारों की अन्तर्राष्ट्रीय प्रसंविदा और आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों की अन्तर्राष्ट्रीय प्रसंविदा 1966 में तैयार किया। 1969 में आर्थिक और सामाजिक परिषद् ने इसको मानव अधिकारों के उल्लंघनों को निपटाने के लिए सशक्त कर दिया।

आयोग ने 1990 से अपना जरूरतमंद राज्यों को सलाहकारी सेवा और तकनीकी सहायता देने की दिशा में लगाया है ताकि सब मानव अधिकारों के उपभोग में आने वाली अड़चनों को निपटा सकें। इसके साथ ही आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक अधिकारों की अभिवृद्धि पर अधिक जोर दिया गया है। इनमें विकास अधिकार और पर्याप्त जीवनस्तर का अधिकार सम्मिलित है। बालक और स्त्रियों के मानव अधिकारों के संरक्षण की तरफ भी आयोग द्वारा ध्यान दिया जा रहा है।

(2) अल्पसंख्यक संरक्षण और विभेद निवारण उप–आयोग– अल्पसंख्यक संरक्षण और विभेद निवारण उप–आयोग मानव अधिकार आयोग का प्रमुख सहायक अंग है। इसकी स्थापना आयोग द्वारा 1947 में की गई थी। इसका कार्य मूलवंश, धार्मिक और भाषाई अल्पसंख्यकों के विषय में विभेद और उसके निवारण के सम्बन्ध में अध्ययन करना और मानव अधिकार आयोग की सिफारिशें करना है। उप–आयोग में तीन स्थायी कार्यवाही समूह है जिनका कार्य है–

(1) शिक्षा में विभेद।

(2) नियोजन और उपयोजन में विभेद।

(3) धार्मिक अधिकारों और आचरणों में विभेद।

(4) राजनैतिक अधिकारों के विषय में विभेद।

(5) न्याय प्रशासन में समानता।

(6) मूलवंश के आधार पर राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक क्षेत्रों में विभेद।

(7) अन्य कृत्यों का करना जो इसको आर्थिक और सामाजिक परिषद् या मानव अधिकार आयोग द्वारा सौंपा जाए।

(3) स्त्री प्रास्थिति आयोग– स्त्री प्रास्थिति आयोग आर्थीक और सामाजिक परिषद् का कृत्यिक, आर्थिक, सामाजिक और शैक्षिक क्षेत्र में स्त्रियों के अधिकारों की अभिवृद्धि के विषय में आर्थिक और सामाजिक परिषद् को रिपोर्ट और सिफारिशें भेजना है।

(4) मानव अधिकार केन्द्र– मानव अधिकार केन्द्र जिनेवा में स्थित है। इसका प्रमुख कार्य मानव अधिकार कार्यकलाप में सपन्वय स्थापित करना। है। यह केन्द्र आयोग, उप–उपयोग, मानव अधिकार समिति, मूलवंश विभेद विलोपन समिति और अन्य नीति निर्धारण और अन्वेषण निकायों को स्टाफ प्रदान करता है। केन्द्र मानव अधिकार के विषय में अध्ययन और अन्वेषण के कार्य का निष्पादन करता है। यह मानव अधिकार के कार्यान्वयन के लिए रिपोर्ट तैयार करता है और मानव अधिकार के क्षेत्र में सलाहकारी सेवा और तकनीकी सहायता के कार्यक्रम का प्रबन्ध करता है।

(5) मानव अधिकारों के लिए संयुक्त राष्ट्र उच्च आयुक्त (United Nation High Commission of Human Rights)– संयुक्त राष्ट्र महासभा ने 20 दिसम्बर, 1993 को मानव अधिकारों के लिए प्राधिकार के अधीन उच्च आयुक्त द्वारा आर्थिक, सामाजिक एवं राजनैतिक अधिकारों प्रभावशाली उपभोग की प्रोत्रति तथा संरक्षण

करेगा। उसका पद उप–महासचिव का होगा। उसके कार्यकाल की अवधि 4 वर्ष होंगी। 185 सदस्यीय महासभा द्वारा पारित उपर्युक्त प्रस्ताव की तिथि से दो माह के भीतर अर्थात् 14 फरवरी, 1994 को महासभा ने मानव अधिकारों के लिए संयुक्त राष्ट्र, उच्च आयुक्त पद के लिए जोसे अयाला लासो के नाम का अनुमोदन कर दिया। जोसे आयला इक्वेडोर में पूर्व विदेश मंत्री हैं तथा वह आयुक्त पद ग्रहण करने से पूर्व संयुक्त राष्ट्र में उपने देश के स्थायी प्रतिनिधि थे। उच्च आयुक्त उच्च नैतिक अवस्थिति तथा व्यक्तिगत सत्यनिष्ठा वाला व्यक्ति होना चाहिए। इस पद के लिए संयुक्त राष्ट्र की प्रणाली में मानव अधिकार से सम्बन्धित कार्यक्लाप में समन्वय स्थापित करन होगा। उच्च आयुक्त को विनिर्दिष्ट उत्तरदायित्व महासभा द्वारा दिए गए हैं जिनमें निम्नलिखित हैं–

(1) सभी महासचिवों के द्वारा सभी सिविल, सांस्कृतिक, आर्थिक, राजनैतिक और सामाजिक अधिकारों जिनके अन्तर्गत विकास का अधिकार सम्मिलित है, के प्रभावी उपयोग की अभिवृद्धि और संरक्षण करना,

(2) मानव अधिकारों के क्षेत्र में संयुक्त राष्ट्र के शिक्षा और लोक सूचना के कार्यक्रमों में समन्वय स्थापित करना,

(3) राज्यों से अनुरोध करते हैं, मानव अधिकारों के क्षेत्र में सलाहकारी सेवाएँ और तकनीकी तथा वित्तीय सहायता प्रदान करना,

(4) मानव अधिकारों के प्रति सम्मान सुनिश्चित करने के लिए सरकारों से विचार–विमर्श करना,

(5) मानव अधिकरों की अभिवृद्धि और संरक्षण में अन्तर्राष्टीय सहयोग बढ़ाना,

(6) सम्पूर्ण संयुक्त राष्ट्र प्रणाली में मानव अधिकारों की अभिवृद्धि और संरक्षण के कार्यकलाप में समन्वय स्थापित करना,

(7) मानव अधिकारों के क्षेत्र में संयुक्त राष्ट्र तंत्र को समुचित रूप से सुदृढ़ बनाना जिसमें उसकी क्षमता और प्रभाव में सुधार हो जाए,

(8) समस्त विश्व में मानव अधिकारों की पूर्ण प्राप्ति में विद्यमान अड़चनों को दूर करने में और मूल अधिकारों के सतत् उल्लंघनों के निवारण में सक्रिय भूमिका अदा करना।

मानव अधिकारों की विकास यात्रा

(Stages of Development of Human Rights)–

प्राचीन काल से ही मानवाधिकारों का विकास होता आया है, परन्तु मानवाधिकारों का वास्तविक विकास संयुक्त राष्ट्र के हस्तक्षेप के बाद ही शुरू हुआ है। द्वितीय विश्व युद्ध की समाप्ति के साथ ही संयुक्त राष्ट्र संघ के द्वारा मानवाधिकारों के विषय में घोषणा–पत्र लागू किया गया यहीं से इसकी विकास यात्रा का प्रारंभ हुआ।

मानवाधिकारों की विकास यात्रा का निम्नलिखित चरणों में अध्ययन किया जा सकता है–

(1) प्रथम चरण (First Stage)– मानवाधिकारों का प्रथम चरण **1945** से **1948** तक माना जाता है। इस चरण में मानव अधिकारों के प्रति अन्तर्राष्ट्रीय सिद्धान्तों की स्वीकृति एवं कियान्वयन हेतु प्रावधान किए गए।

संयुक्त राष्ट्र चार्टर के अनुच्छेद 68 के तहत अन्तर्राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग के विभिन्न उपकरण (Instruments)–

–संयुक्त राष्ट्र चार्टर, 1945

–मानव अधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा, 1948

–नरसंहार जैसे अपराध रोकने एवं दण्ड से सम्बन्धित प्रसंविदा, 1948

–संघ बनाने एवं संगठित होने के अधिकारों से सम्बन्धित ILO का संविदा संख्या 87, 1948

–दास व्यापार को रोकने से सम्बन्धित पूरक प्रसंविदा 19561

(2) द्वितीय चरण (Second Stage)– मानवाधिकारों का द्वितीय चरण **1949 से 1966** तक माना जाता है। यह चरण सार्वभौमिक घोषणा द्वारा निश्चित किए कए कार्यक्रमों की वैधानिकता

प्राप्त करने वाला चरण माना जाता है। इसके अन्तर्गत निम्नलिखित अधिनियम पारित किए गए–

1) शरणार्थी प्रसंविदा, 1951 (अतिरिक्त प्रोटोकाल 1967)।
2) बन्धुआ मजदूरी व्यवस्था की सम्पत्ति से सम्बनधित प्रसंविदा (ILO का संविदा 105), 1957।
3) रोजगार एवं व्यवस्था में विभेदीकरण की समाप्ति (ILO का संविदा 111), 19581
4) शिक्षा में विभेदीकरण की समाप्ति (यूनेस्को संविदा), 19601
5) रंगभेद की समाप्ति, 19651
6) सिविल व राजनीतिक अधिकरों की अन्तर्राष्ट्रीय प्रसंविदा, 19661
7) सिविल एवं राजनीतिक प्रसंविदा का ऐच्छिक प्राटोकाल, 19661
8) आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक अधिकारों की अन्तर्राष्ट्रीय प्रसंविदा (ICESCR), 19661

(3) तृतीय चरण (Third Stage)– मानवाधिकारों के तृतीय चरण का काल **1967 से 1989** तंक माना जाता है। इस चरण में मानव अधिकारों से सम्बन्धित चार प्रवृत्तियाँ देखी जा सकती है–

(a) प्रसंविदाओं एवं ऐच्छिक प्रोटोकालों का लागू करना, 19761

(b) अन्य संधियाँ।

- रंगभेद से सम्बन्धित अपराधों को कम करने एवं दण्ड व्यवस्था से सम्बन्धित प्रसंविदा, 19731
- महिलाओं से सम्बन्धित सभी प्रकार के विभेदीकरण की समाप्ति से सम्बन्धित प्रसंविदा, 19791।
- यातना, क्रूरता, अमानवीय व्यवहार एवं निम्नस्तरीय आंचरण एवं दण्ड की समाप्ति से सम्बन्धित प्रसंविदा, 1984।
- बाल अधिकार प्रसंविदा, 1989।

(c) क्रियान्वयन व्यवस्था एवं अंगों का सशक्तीकरण।

(d) मानव अधिकारों (शांति, विकास एवं पर्यावरण) के संरक्षण एवं संवर्धन से सम्बन्धित नये क्षेत्रों एवं तरीकों की जिज्ञासा जागृत करना।

(4) चतुर्थ चरण (Fourths Stage)– मानवाधिकार विकास के चरण में चतुर्थ चरण **1989 से वर्तमान** तक माना जाता हैं मानव अधिकारों के विकास में इस चरण को परिवर्तन की हवा के रूप में जाना जाता है।

(a) वियना का मानव अधिकार सम्मेलन, 1993।

(b) नये मानक निश्चित करने के स्थान पर पूर्व निर्धारित मानकों को लागू कराने पर जोर देना।

(c) संरक्षित कूटनीति एवं पूर्व चेतावनी।

इस प्रकार समय–समय पर मानवाधिकारों का विकास होता रहा है।

मानवाधिकारों का कियान्वयन

(Implementation of Human Rights)

मानवाधिकारों का क्रियान्वन तथा उनकी रक्षा के **प्रयास तीन स्तरों** पर दिखाई देते हैं। पहला संयुक्त राष्ट्र तथा उसकी संस्थाओं द्वारा, दूसरा विभिन्न सदस्य देशों द्वारा तथा तीसरा स्वैच्छिक संस्थाओं द्वारा। संयुक्त राष्ट्र संघ ने इन मानवाधिकारों की रक्षा व संवर्धन के लिये निरन्तर प्रयास किये हैं। विभिन्न देशों ने राष्ट्रीय स्तर पर भी मानवाधिकारों की रक्षा के लिये अलग मानवाधिकारों की स्थापना की है। इसके अतिरिक्त कतिपय गैर–स्वैच्छिक विश्व संस्थायें; जैसे–एमनेस्टी इण्टरनेशनल, ह्यूमन राइट्स वॉच आदि भी मानवाधिकारों की रक्षा हेतु प्रयासरत हैं।

संयुक्त राष्ट्र के प्रयास– मानवाधिकारों का उल्लंघन अब किसी देश की आन्तरिक समस्या नहीं रह गया है। मानवाधिकारों व लोकतंत्र की रक्षा के लिये विश्व समुदाय व सुरक्षा परिषद् अब किसी देश के आन्तरिक मामलों में भी हस्तक्षेप कर सकते हैं। संयुक्त राष्ट्र के निम्न प्रयास उल्लेखनीय हैं :

1. मानव अधिकार परिषद्– मानव अधिकारों के वैश्विक अनुपालन को सुनिश्चित करने के लिए आंरभ में संयुक्त राष्ट्र संघ ने

1946 में मानव अधिकार आयोग की स्थापना की थी। इस आयोग का मुख्य कार्य मानव अधिकार से सम्बन्धित विभिन्न मुद्दों पर प्रस्ताव व सिफारिशें भेजना तथा जांच रिपोर्ट प्रस्तुत करना था, लेकिन यह अधिक प्रभावी नहीं था। अतः संयुक्त राष्ट्र संघ ने मानवाधिकार आयोग के स्थान पर मानव अधिकार परिषद् की स्थापना की। महासभा ने एक प्रस्ताव द्वारा मानव अधिकार परिषद् की स्थापना की थी, जो 15 मार्च 2006 को अस्तित्व में आयी। यह मानव अधिकारों के अनुपालन के क्षेत्रों में संयुक्त राष्ट्र की सबसे महत्वपूर्ण संस्था है। यह एक अन्तर्राष्ट्रीय संस्था है, जिसमें 47 सदस्य देश होते हें, जिनका निर्वाचन तीन वर्ष के लिए महासभा द्वारा किया जाता है। मानव अधिकार परिषद् विश्व में मानव अधिकारों के संरक्षण व प्रोत्साहन हेतु उत्तरदायी है। यह परिषद् विभिन्न देशों में अपने जांचकर्ता भेजकर मानवाधिकारों के उल्लंघन की जांच करती है तथा अपनी रिपोर्ट संयुक्त राष्ट्र संघ की महासभा को प्रस्तुत करती है। यदि कोई राष्ट्र मानवाधिकारों का उल्लंघन करता है तो सुरक्षा परिषद् उसके विरूद्ध सैनिक कार्यवाही भी कर सकती है। संयुक्त राष्ट्र मानव अधिकार के मामलों में रिपोर्ट तैयार करने के लिए विशेष रिपोर्टर तथा कार्यदलों की स्थापना करता है। इनकी नियुक्ति मानवाधिकार परिषद् तथा आर्थिक व सामाजिक परिषद् द्वारा की जाती है। ये रिपोर्टर तथा कार्यदल मौके पर जाकर मानवाधिकारों के उल्लंघन की स्थित की जांच करते हैं तथा सम्बन्धित जानकारी जुटाते हैं। इनकी रिपोर्ट के आधार पर ही मानव अधिकार परिषद् उल्लंघन के सम्बन्ध में आगे की कार्यवाही करती है। इस प्रकार

मानवाधिकार परिषद् मानवाधिकारों के संरक्षण में विश्व स्तर पर एक महत्वपूर्ण कार्य कर रही है।

2. मानवाधिकार उच्चायुक्त– उच्चायुक्त कार्यालय का मुख्य दायित्व संयुक्त राष्ट्र के अतंर्गत कार्य कर रही विभिन्न मानवाधिकार संस्थाओं को विशेषज्ञ, सलाह तथा सहायता प्रदान करता है। उच्चायुक्त कार्यालय इन सभी संस्थाओं को सचिवालयी सविधायें भी प्रदान करता है। इसका गठन दिसम्बर 1993 में महासभा के प्रस्ताव द्वारा किया गया था। उच्चायुक्त का कार्यकाल चार वर्ष होता है। इसका मुख्यालय जेनेवा में है लेकिन उसकी एक शाखा न्यूयार्क में भी है।

3. मानव अधिकार केन्द्र– यह केन्द्र मानवाधिकार के क्षेत्र में शोध तथा अध्ययन हेतु संयुक्त राष्ट्र संघ की एक महत्वपूर्ण संस्था है। यह जेनेवा में स्थित है। इसका मुख्य कार्य मानवाधिकार के विभिन्न पहलुओं पर शोध व अध्ययन करना तथा मानवाधिकार से सम्बन्धित सूचनाओं व जानकारी को प्रकाशित व प्रसारित करना। यह संस्था संयुक्त राष्ट्र के विभिन्न अंगों को मानवाधिकार के संरक्षण में सहायता पहुंचाती है। इसकी संचार शाखा मानवाधिकार उल्लंघन के बारे में मिली जानकारी की जांच–पड़ताल करती है।

4. स्वैच्छिक संस्थायें–उक्त प्रयासों के अतिरिक्त राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर कार्यरत कतिपय स्वैच्छिक संस्थायें मानवाधिकार की रक्षा, जागरूकता तथा प्रचार–प्रसार हेतु कार्य करती हैं। इनमें लंदन स्थित एमनेस्टी इंटरनेशनल सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। इसकी

स्थापना 1961 में की गयी थी। यह संस्था प्रतिवर्ष मानव अधिकारों के सम्बन्ध में अपनी रिपोर्ट तैयार करती है। इसी तरह अमेरिका में स्थित ह्यूमन राइट वॉच नामक संस्था मानवाधिकार के प्रचार–प्रसार व संरक्षण में महत्वपूर्ण कार्य कर रही है। इस संरक्षण व प्रोत्साहन के लिए विभिन्न देशों में गैर–सरकारी संस्थायें कार्यरत हैं। भारत में कार्यरत पीपुल्स यूनियन फॉर सिविल लिबर्टीज इसी प्रकार की संस्था है।

भारत में मानवाधिकारों की व्यवस्था

(Human Rights System in India)

भारत विश्व का सबसे बड़ा लोकतांत्रिक देश है तथा भारतीय संविधान में समानता, न्याय व स्वतंत्रता के मूल्यों को शामिल किया गया है। आजादी के बाद भारत में पानवाधिकारों के संरक्षण से संबंधित निम्न उपाय किये गये हैं :

1. भारत ने संयुक्त राष्ट्र संघ के चार्टर पर हस्ताक्षर किये हैं तथा मानव गरिमा व उसके अधिकारों के प्रति अपनी प्रतिबद्धता जताई है। समय–समय पर मानवाधिकारों की रक्षा के लिए संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा प्रस्तावित सभी संधियों पर भारत ने हस्ताक्षर कर दिये हैं। भारत वर्तमान में संयुक्त राष्ट्र संघ की मानवाधिकार परिषद् का सदस्य है तथा सक्रिय भूमिका निभा रहा है।

2. भारत के संविधान में भाग 3 में मौलिक अधिकारों को स्थान दिया गया है, जिसमें स्वतंत्रता, समानता, धार्मिक स्वतंत्रता तथा अल्पसंख्यकों के विशेष अधिकारों के सामाजिक व आर्थिक अधिकारों को स्थान दिया गया है तथा एक समतापूर्ण समाज की स्थापना का संकल्प लिया गया है।

3. भारत के संविधान के नीति निदेशक तत्वों में नागरिकों के सामाजिक व आर्थिक अधिकारों को स्थान दिया गया है तथा एक समतापूर्ण समाज की स्थापना का संकल्प लिया गया है।

4. **राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग**—1993 में संसद के एक कानून द्वारा राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग की स्थापना की गयी है। मानवाधिकार के उल्लंघन के मामले में इस आयोग को सिविल कोर्ट की शक्तियां प्राप्त हैं। यह आयोग उल्लंघ्न के मामलों की जांच कर सरकार को उचित कार्यवाही हेतु अपनी संस्तुति प्रस्तुत करता है। आयोग का अध्यक्ष सर्वोच्च न्यायालय का सेवानिवृत्ति मुख्य न्यायाधीश होता है। आयोग का मुख्य कार्य मानवाधिकार उल्लंघन के मामलों की जांच करना तथा उनके प्रोत्साहन तथा संरक्षण के लिए सिफारिश करना है। वर्तमान में आयोग ने बच्चों के मानवाधिकार विशेषकर बाल—श्रमिकों की समस्या, महिलाओं तथा जनजातियों के उत्पीड़न व विकलांग व्यक्तियों के मानवाधिकारों के मुद्दों को अपने कार्यों में प्राथमिकता दी है।

5. भारत में प्रेस की स्वतंत्रता, स्वैच्छिक संगठनों तथा मानवाधिकार की संस्थाओं के माध्यम से भी इन अधिकारों की रक्षा का प्रयास किया जाता है।

6. भारत में अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति, अन्य पिछड़े वर्गों तथा समाज के कमजोर वर्गों के अधिकारों की रक्षा के लिये संविधान व कानूनों में विशेष उपाय किये गये हैं।

भारत में महिलाओं तथा बच्चों के मानवाधिकार

भारत में कमजोर वर्गों जैसे महिलाओं, बच्चों, विकलांगों आदि के विशेष अधिकारों की रक्षा हेतु कदम उठाये गये हैं। संविधान तथा कानूनों में इसके लिये विशेष प्रावधान किये गये हैं। इस सम्बन्ध में निम्न बिन्दु महत्वपूर्ण है :

1. संयुक्त राष्ट्र की महासभा द्वारा 1979 में महिलाओं के मानवाधिकारों के लिये अन्तर्राष्ट्रीय कानून पारित किया गया था। इस कानून में समाज के विभिन्न क्षेत्रों में महिलाओं को पुरूषों के समान मानवाधिकार दिये गये हैं तथा उनके प्रति प्रत्येक प्रकार का भेदभाव समाप्त किया गया है। इसी तरह महासभा ने 1989 में एक अलग कानून पारित कर बच्चों के अलग मानवाधिकारों को मान्यता प्रदान की है। भारत ने संयुक्त राष्ट्र के इन दोनों कानूनों को स्वीकार कर लिया है तथा उन्हें लागू करने की बचनबद्धता व्यक्त की है।

2. भारत के संविधान में भी बच्चों व महिलाओं के मूल अधिकारों, मूल कर्तव्यों व नीति निदेशक तत्वों में विशेष प्रावधान किये गये हैं।

महिलाओं के मानवाधिकार के सम्बन्ध में निम्न प्रावधान महत्वपूर्ण हैं :

(अ) अनुच्छेद 14 के अन्तर्गत महिलाओं को कानूनी समानता का अधिकार तथा कानूनों के समान संरक्षण का अधिकार प्रदान किया गया है।

(ब) अनुच्छेद 15 में लिंग के आधार पर महिलाओं के प्रति प्रत्येक प्रकार के भेदभाव की मनाही की गयी है तथा महिलाओं के विकास के लिये राज्य को विशेष उपाय करने की इजाजत दी गयी है।

(स) अनुच्छेद 16 के अन्तर्गत सरकारी रोजगार में लिंग के आधार पर महिलाओं के प्रति भेदभाव की मनाही की गयी है। दूसरे शब्दों में रोजगार में महिलाओं को पुरूषों के समान अवसर उपलब्ध होंगे।

(द) नीति निदेशक तत्वों के अन्तर्गत अनुच्छेद 39 में पुरूषों के समान ही समान कार्य के लिये समान मजदूरी अथवा वेतन देने का निर्देश दिया गया है। इसी अनुच्छेद में महिलाओं के कल्याण के लिये विशेष उपाय अपनाने की बात कही गयी है।

(य) मूल कर्तव्यों में महिलाओं के लिये अपमानजनक व्यवहार न करना प्रत्येक नागरिक का कर्तव्य बताया गया है।

(र) संसद द्वारा 1992 में पारित 73वें तथा 74वें संविधान संशोधनों द्वारा क्रमशः महिलाओं को ग्राम पंचायतों तथा नगरपालिकाओं में सभी निर्वाचित पदों पर एक–तिहाई आरक्षण प्रदान किया जायेगा। भारत के कई राज्यों, जैसे–हिमाचल प्रदेश, ओडिशा (उड़ीसा), मध्य प्रदेश आदि में महिलाओं को पंचायतों में पचास प्रतिशत आरक्षण प्रदान कर दिया गया है। उत्तर प्रदेश में भी इस दिशा में सरकार द्वारा विचार किया जा रहा है।

बच्चों के मानवाधिकारों के सम्बन्ध में भी संविधान में कतिपय उपाय किये गये हैं:

(अ) अनुच्छेद 15 वें बच्चों के विकास के लिये विशेष उपाय अपनाने हेतु राज्य को अनुमति प्रदान की गयी है।

(ब) अनुच्छेद 24 के अन्तर्गत 14 साल से कम उम्र के बच्चों के लिये हानिकारक व खतरनाक उद्योगों में काम पर लगाने की मनाही की गयी है।

(स) अनुच्छेद 21 अ में 6–14 वर्ष के बच्चों के लिये मुक्त व अनिवार्य शिक्षा का मौलिक अधिकार दिया गया है। यह अधिकार 86वें संविधान संशोधन द्वारा 2002 में प्रदान किया गया है तथा 2010 में संसद द्वारा अलग कानून बनाकर इसे सभी राज्यों में क्रियान्वित कर दिया गया है।

(द) नीति निदेशक तत्वों के अन्तर्गत अनुच्छेद 39 में बच्चों को शोषण से मुक्त करने तथा उनके विकास की समुचित व्यवस्था करने का निर्देश दिया गया है।

(य) अनुच्छेद 45 में 6 वर्ष से कम उम्र के बच्चों की देखभाल करने तथा उनकी शिक्षा व्यवस्था हेतु राज्य को निर्देश प्रदान किया गया है।

(र) मूल कर्तव्यों में 11वें कर्तव्य में यह कहा गया है कि प्रत्येक अभिभावक का यह कर्तव्य होगा कि वह अपने 6–14 वर्ष के बच्चों को शिक्षा के अवसर प्रदान करने की व्यवस्था करेगा।

3. उक्त संवैधानिक प्रावधानों के अतिरिक्त **संसद के कानूनों** द्वारा भी महिलाओं के मानवाधिकार से संबधित विषयों पर कानून पारित कर उन्हें विशेष अधिकार दिये गये हैं अथवा उनके अधिकारों

के संरक्षण हेतु विशेष उपाय किये गये हैं। इन उपायों में दहेज प्रथा निरोधक कानून, 1961, लड़कियों को पैतृक संपत्ति में समान अधिकार, घरेलू हिंसा निरोधक कानून, कार्यस्थलों पर महिला उत्पीड़न निरोधक कानून, महिलाओं का मीडिया व विज्ञापन में आपत्तिजनक चित्रण निरोधक कानून, बालिका भ्रूण हत्या निरोधक कानून आदि प्रमुख हैं। इसी तरह बच्चों के लिये भी कानून बनाकर उनके अधिकरों को संरक्षण प्रदान किया गया है। इनमें प्रमुख हैं—बाल श्रम निरोधक कानून, 1976, नाबालिक अपराधियों के लिये कम दण्ड व सुधारात्मक उपायों की व्यवस्था आदि। बाल अपराध न्याय अधिनियम के अन्तर्गत 18 वर्ष से कम के बाल अपराधियों के लिये अलग न्यायालयों की स्थापना की गयी है तथा उनके लिए प्रौढ़ अपराध्यिों से भिन्न—गृहों की स्थापना की गयी है, ताकि उनके सुधार के उपाय अलग से लागू किये जा सकें। महिलाओं व बच्चों के विकास के लिये केन्द्र व प्रान्त की सरकार द्वारा विशेष कार्यक्रम व योजनाएँ भी लागू की गयी हैं।

4. महिलाओं व बच्चों के अधिकारों को जो **कानूनी व संवैधानिक संरक्षण** प्रदान किये गये हैं, उनका प्रभावी क्रियान्वयन हो रहा है कि नहीं, इस बात की जांच करने के लिये अलग आयोगों

की स्थापना की गयी है। **संसद के एक कानून द्वारा 1990 में राष्ट्रीय महिला आयोग** की स्थापना की गयी है। आयोग का मुख्य कार्य यह देखना है कि महिलाओं को संविधान व कानूनों के अन्तर्गत जो विशेष संरक्षण व अधिकार प्रदान किये गये हैं, उनका पालन हो रहा है अथवा नहीं। इन अधिकारों के उल्लंघन की दशा में सम्बन्धि तमामले की जांच कर सकता है तथा दोषी व्यक्ति के विरूद्ध कार्यवाही की संस्तुति कर सकता है। जांच के सम्बन्ध में महिला आयोग को सिविल न्यायालय की शक्तियां प्राप्त हैं। इसी तरह के आयेग राज्यों में भी स्थापित किये गये हैं। इसी प्रकार 2005 में पारित संसद के एक अधिनियम के अन्तर्गत 2007 में राष्ट्रीय बाल अधिकार आयोग की स्थापना की गयी है। इसी अधिनियम में बच्चों के विभिन्न अधिकारों का उल्लेख किया गया है। इसे भी महिला आयोग के समान अधिकार व शक्तियां प्राप्त हैं। राष्ट्रीय बाल अधिकार आयोग बच्चों को प्राप्त अधिकारों के क्रियान्वयन की निगरानी करता है।

मानवाधिकारों की चुनौतियां

(Challenges of Human Rights)

भारत व तमाम विकासशील देशों में संविधान तथा कानून द्वारा नागरिकों को मानवाधिकार प्रदान किये गये हैं लेकिन उनके प्रभावी क्रियान्वयन में अनेक चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। इन चुनौतियों का उल्लेख आगे किया जा रहा है :

1. जन जागरूकता का अभाव—भारत में नागरिकों में मानवाधिकारों के प्रति जन जागरूकता का अभाव है। गत् सात दशकों में यद्यपि साक्षरता की दर में बढ़ोतरी हुयी है लेकिन नागरिकों को अपने अधिकारों तथा उनके क्रियान्वयन तथा प्रशासन के कार्य संचालन की वांछनीय जानकारी नहीं है। कमजोर वर्गों विशेषकर महिलाओं, अनुसूचित जातियों/जनजातियों तथा ग्रामीण जनता में इन अधिकारों के प्रति जागरूकता का नितान्त अभाव है। इसका परिणाम यह होता है कि प्रशासन व सबल वर्ग जब भी मानवाधिकारों का उल्लंघन करता है तो उनके विरूद्ध प्रभावी कार्यवाही नहीं हो पाती है। गरीबी व अशिक्षा मानवाधिकारों के मार्ग में सबसे बड़ी बाधायें हैं।

2. प्रशासन की संवेदनहीनता– भारत में नौकरशाही व पुलिस प्रशासन मानवाधिकारों के प्रति संवेदनशील नहीं है। इसके साथ ही लचर व अस्पष्ट कानूनों तथा प्रशासनिक विवेकाधिकारों के कारण प्रशासन नागरिक अधिकारों का प्रभावी कियान्वयन नहीं कर पाता है। कानून व व्यवस्था प्रशासन विशेषकर पुलिस प्रशासन के सम्बन्ध में आम नागरिकों के बीच अच्छी छवि नहीं है, जबकि मानवाधिकरों को लागू करने की एक बड़ी जिम्मेदारी कानून व्यवस्था प्रशासन की ही होती है। भारत में प्रशासन का व्यवहार व कार्य संस्कृति भी मानवाधिकारों के अनुपालन के अनुरूप नहीं है। प्रशासनिक अधिकारों के प्रति संवेदनशील नहीं हैं।

3. मानवाधिकारों के प्रभावी कियान्वयन तथा पर्यवेक्षण का अभाव–मानवाधिकारों से सम्बन्धित कानूनों के कियान्वयन में भारत की स्थिति संतोषजनक नहीं कही जा सकती है। कियान्वयन के पर्यवेक्षण के लिये जिन आयोगों की स्थापना की गयी वे सलाहकारी संस्थाओं के रूप में कार्य कर रहे हैं। उन्हें दोषी व्यक्तियों के विरूद्ध प्रभावी कार्यवाही करने का अधिकार नहीं हैं। राजनीतिक नेतृत्व भी मानवाधिकारों के कियान्वयन के प्रति गंभीर प्रतीत होता है। इसका परिणाम यह हुआ है कि विभिन्न कमजोर

वर्गों; जैसे–महिलाओं, बच्चों तथा अनुसूचित जातियों/जन जातियों आदि के लिये घोषित मानवाधिकार कानून कागजी घोषणायें बन कर रह गये हैं।

4. न्याय में अत्यधिक देरी–मानवाधिकारों को लागू करने में न्यायपालिका की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। जब भी व्यक्ति के मानवाधिकारों का उल्लंघन होता है व्यक्ति न्यायपालिका की शरण लेता है। यद्यपि भारत में न्यायपालिका की छवि स्वतंत्र व निष्पक्ष न्यायपालिका पर मुकदमों का बोझ इतना अधिक है कि कई बार उनका फैसला आने में दशकों लग जाते हैं। न्याय की देरी न्याय को मना करने जैसी है। दूसरे, देरी के साथ–साथ भारत की न्याय व्यवस्था गरीबों व कमजोर वर्गों की दृष्टि से मंहगी भी बहुत है। इन कारणों से गरीब व कमजोर तबके के लोग न्याय नहीं प्राप्त कर पाते हैं। अतः न्यायपालिका का बढ़ता बोझ तथा महंगी न्याय व्यवस्था मानवाधिकारों के लचर क्रियान्वयन के महत्वपूर्ण कारण है।

5. संगठित व सकिय मानवाधिकार संगठनों का अभाव–पश्चिमी देशों में गैर–सरकारी संगठन मानवाधिकारों के संरक्षण तथा उनके प्रति जागरूकता उत्पन्न करनें में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। साथ ही ये संगठन नौकरशाही व सरकार द्वारा

शक्ति के दुरूपयोग पर भी रोक लगाने का काम करते हैं। अमेरिका की ह्यूमन राइट्स वॉच संस्था तथा इंग्लैण्ड की एमनेस्टी इण्टरनेशनल इसी तरह की गैर–सरकारी संस्थायें हैं जो विश्व स्तर पर मानवाधिकारों के संरक्षण व प्रोत्साहन के लिये कार्य कर रही हैं। भारत में मानवाधिकार के क्षेत्र में काम करने वाले सक्रिय स्वैच्छिक संगठनों का अभाव है। जो संगठन हैं भी वे अत्यंत सीमित दायरे में काम करते हैं। गैर–सरकारी संगठनों का विकास भारत में अभी शैशवावस्था में है।

6. मानवाधिकारों की संस्कृति का अभाव–मानवाधिकारों के सफल अनुपालन के लिये समानता व न्याय पर आधारित सामाजिक संस्कृति की आवश्वयकता होती है। भारत में जातिगत असमानतायें तथा महिलाओं के प्रति असमानता का दृष्टिकोण सामाजिक व्यवहार का अंग बना हुआ है। इस असमानता की भावना तथा ऊँच–नीच के भेदभाव के कारण सामाजिक स्तर पर मानवाधिकरों, के उल्लंघन का विरोध नहीं होता । उदाहरण के लिये, बालिका भ्रूण हत्या को ही लें, समाज में अभी भी इसके प्रति सही दृष्टिकोण का निर्माण नहीं हो पाया है। इसी तरह महिलाओं को परिवार, समाज तथा कार्यस्थलों पर भेदभाव व असमानता का सामना करना पड़ता है। पितृ

सत्तात्मक सामाजिक मूल्य महिलाओं के मानवाधिकारों के मार्ग में सबसे बड़ी बाधा है। गरीबी तथा आर्थिक असमानता का वातावरण भी भारत में मानवाधिकरों के उल्लंघन के लिये उत्तरदायी है।

मानवाधिकरों की चुनौतियों को दूर करने के उपाय–

भारत में मानवाधिकरों का अनुपालन सुनिश्चित करने तथा उनके मार्ग में आने वाली चुनौतियों का सामना करने के लिये निम्न उपायों की आवश्यकता है :

1. शिक्षा के प्रचार–प्रसार तथा मीडिया आदि के द्वारा जनता में मानवाधिकरों के बारें में जागरूकता उत्पन्न करने का प्रयास किया जाना चाहिये।

2. प्रशिक्षण तथा अन्य उपायों से प्रशासन तथा नौकरशाही को मानवाधिकारों के प्रति संवेदनशील बनाने की आवश्यकता है।

3. न्याय प्रणाली में सुधार कर न्याय को त्वरित तथा आम व्यक्ति के लिये सुगम बनाने की आवश्यकता है। इसके लिये कमजोर वर्गों के मानवाधिकारों की रक्षा के लिये अलग से न्यायालयों की भी स्थापना की जा सकती है।

4. मानवाधिकरों के संरक्षण से सम्बन्धित कानूनों को सरल तथा तर्कसंगत बनाया जाना चाहिये तथा प्रशासनिक अधिकारियों के विवेकाधिकारों को सीमित किया जाना चाहिये।

5. मानवाधिकरों के क्रियान्वयन की निगरानी करने वाले आयोगों जैसे–मानवाधिकार आयोग, राष्ट्रीय महिला आयोग तथा राष्ट्रीय अनुसूचित जाति आयोगों को अधिक शक्तियां प्रदान कर उनकी भूमिका का विस्तार किया जाना चाहिये।

6. मानवाधिकरों के संरक्षण व प्रोत्साहन के क्षेत्र में काम कर रही गैर–सरकारी संस्थाओं को मजबूत बनाये जाने की आवश्यकता है। ये संस्थायें मानवाधिकरों के अनुपालन तथा उनके प्रति जागरूकता उत्पन्न करने में महत्वपूर्ण निभाती हैं।

राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग की स्थापना, संरचना व उपलब्धियाँ

(Establishment, Structure and achievemants of National Human Rights Commission)

भारत में मानवाधिकारों की रक्षा हेतु 28 सितम्बर 1993 से मानवाधिकार संरक्षण अधिनियम लागू किया इस अधिनियम के तहत 10 अक्टूबर 1993 में न्यायमूर्ति रंगनाथ मिश्र की अध्यक्षता में दिल्ली में राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग की स्थापना किया गया। मानवाधिकार प्रत्येक व्यक्ति का जन्मसिद्ध अधिकार है, प्राचीन काल से ही विविध ग्रंथों, साहित्यों के माध्यम से मानवाधिकारों के लिए आवाज उठायी जाती रही है, परंतु मानवाधिकारों को वास्तविक महत्व संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा मानवाधिकारों के लिए पूरे विश्व स्तर पर प्रयास किया गया और आगे चलकर राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग का गठन कर आम नागरिकों को उनके अधिकारों से परिचित करवाकर उन्हें विविध मानवाधिकार प्रशासनिक स्तर पर प्रदान किए गए।

संयुक्त राष्ट्र संघ का घोषणा–पत्र मानवीय अधिकारों की खोज एवं सुरक्षा का महत्वपूर्ण दस्तावेज है। विश्व को युद्धों के भयंकर विनाश से बचाने के लिए संयुक्त राष्ट्र संघ सदैव संघर्षरत है। इस संस्था का दृढ़ विश्वास है कि यदि विश्व सामाजिक प्रगति, स्वतंत्रता, समानता, शांति के साथ आगे बढ़े तो मानवीय गरिमा और मानव अधिकारों की सुरक्षा की जा सकती है। संयुक्त राष्ट्र संघ अन्तर्राष्ट्रीय शांति, मानव अधिकार के लिये बिना धार्मिक, भाषायी,

प्रजाति, लिंग, क्षेत्रीय भेदभाव के प्रयासरत है। वैश्विक मानव अधिकार घोषणा–पत्र के बाद संयुक्त राष्ट्र संघ ने अन्तर्राष्ट्रीय विधान और मानक निर्धारित किया है। पिछले कुछ दशकों में विश्व के लगभग समस्त देशों ने मानवाधिकार संधियों पर हस्ताक्षर किए है। मानव अधिकार का विषय चूँकि व्यक्तियों के मध्य एक व्यक्ति का दूसरे के तथा व्यक्तियों का राज्य के साथ संबंधित है, इसलिए मानव अधिकार सर्वप्रथम एक राष्ट्र का विषय बन गया है।

एक राष्ट्र या राज्य स्तर पर मानव अधिकारों की सुरक्षा की जा सकती है। यह कार्य निष्पक्ष न्यायपालिका, विधायिका एवं ईमानदार कार्यपालिका तथा संविधान के लिखित स्तर पर मूलभूत अधिकारों की व्यवस्था करके की जा सकती है। राष्ट्रीय स्तर पर मानव अधिकारों के लिए जागरूकता लाने का काम राष्ट्रीय प्रेस, संचार तंत्र कर सकते हैं। आज की दुनिया में अन्तर्राष्ट्रीय मानव अधिकारों का प्रतिमान एवं मूल्यांकन बहुत से देशों के विधि–विधानों में संकलित कर लिए गए हैं, किन्तु मुख्य मुद्दों उनके कियान्वयन का है।

राष्ट्रीय मानवाधिकार संस्था की स्थापना के उद्देश्य (Objectives of National Human Rihgts) –

1945 में द्वितीय विश्व युद्ध की समाप्ति के बाद संयुक्त राष्ट्र संघ के अथक प्रयासों से मानवाधिकार संबंधी घोषणा–पत्र पारित लिया गया। जिसके अंतर्गत राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग गठित करने का निर्णय किया गया। राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग के बारे में प्रथम

चर्चा 1946 के आर्थिक, सामाजिक परिषद् में की गई थी। इसके दो साल पहले ही वैश्विक मानव अधिकार घोषणा–पत्र में मानव अधिकारों के लिए विश्व स्तर पर एक सामान्य घोषणा कर दी गयी थी। इसके पश्चात् 1960 एवं 1970 के दशक में मानवाधिकारों से संबंधित अनेक विचार सामने आए और सितम्बर 1978 में जिनेवा में इस विषय पर एक सम्मेलन हुआ। जिसमें निम्नलिखित सुझाव सामने आए–

1. मानव अधिकारों के विकास संबंधी कर्तव्यों को पूरा करना तथा अंतर्राष्ट्रीय संगठनों को सहयोग देना।

2. मानव अधिकारों के संदर्भ में कानूनी, न्यायिक एवं प्रशासनिक कार्यों की समीक्षा करना तथा एक रिपोर्ट तैयार कर संबंधित अधिकारियों को देना।

3. मानव अधिकारों के विषय में सरकार द्वारा माँगे जाने पर सलाह देना।

4. किसी भी राज्य से इस विषय में सिफारिश करना तथा राष्ट्रीय सरकार से इस दिशा में कदम उठाने के लिए माँग करना।

5. मानव अधिकारों के विषय में लोगों को जागरूक करना तथा इसके लिए जनमत तैयार करना।

6. मानव अधिकार हेतु किसी देश की सरकार और लोगों के लिए सूचनात्मक कार्य करना।

इस तरह के नीति निर्देशों को संयुक्त राष्ट्र संघ का मानव अधिकार आयोग एवं सामान्य सभा ने स्वीकार कर लिया था। सभा ने राष्ट्रों से इस विषय में उचित कदम उठाने के लिए कहा है। महासचिव से इस विषय में विस्तृत रिपोर्ट देने को भी कहा गया है। सन् 1980 के दशक में संयुक्त राष्ट्र संघ ने इस क्षेत्र में गहरी रूचि दिखाई और महासचिव ने तमाम प्रतिवेदन सामान्य सभा को सौंपे। इसी समय में विषय के कई देशों में, संयुक्त राष्ट्र संघ मानव अधिकार आयोग की सहायता से राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोगों का गठन किया गया।

पेरिस सिद्धान्त—पेरिस में सर्वप्रथम 7 से 9 अक्टूबर, 1991 के बीच एक अंतर्राष्ट्रीय कार्य गोष्ठी का आयोजन किया गया। इस कार्य गोष्ठी का विषय यह था कि कैसे मानव अधिकारों को राष्ट्रीय कार्य गोष्ठी का आयोजन किया गया। इस कार्य गोष्ठी का विषय यह था कि कैसे मानव अधिकारों को राष्ट्रीय आयोगों द्वारा सुरक्षित एवं विकसित किया जा सकता है? इस सम्मेलन का प्रस्ताव **'पेरिस सिद्धांत'** के रूप में विख्यात हुआ। अनेक वाद—विवाद, विस्तृत चर्चा के बाद पेरिस सिद्धान्त में निम्नलिखित व नियम बनाए गए—

(1) संयुक्त राष्ट्र संघ, क्षेत्रीय संघों एवं राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग को उनके कार्य में सहयोग देना।

(2) अंतर्राष्ट्रीय उपायों (उपकरणों) को सूचनात्मक सहयोग देना।

(3) मानव अधिकारों के बारे में जनता को शिक्षित एवं जागरूक बनाना।

(4) राष्ट्रीय कानूनों एवं प्रथाओं को अंतर्राष्ट्रीय मानव अधिकार प्रतिमान के अनुसार विकसित करना।

(5) मानव अधिकारों से संबंधित किसी भी विषय में शासन को सिफारिश, सुझाव एवं सूचना देना।

इस प्रकार संयुक्त राष्ट्र संघ की पहल के बाद विश्व के अनेक देशों में मानव अधिकार आयोगों का गठन किया जा चुका है।

भारत में राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग की स्थापना व इतिहास

(History of National Human Right Commission in India)

भारत में मानव अधिकारों के लिए संघर्ष तो औपनिवेशक काल में ही हो चुका था, लेकिन आपातकाल (1975–77) में और यह उभकर सामने आया। आपातकाल के दौरान की गयी ज्यादतियों के कारण लोगों के द्वारा नागरिक एवं लोकतांत्रिक अधिकारों को बहाल किए जाने की माँग की गयी। राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग की स्थापना का ऐतिहासिक सूत्र राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग की स्थापना का ऐतिहासिक सूत्र राष्ट्रीय मुक्ति संग्राम तक फैला है। 1930 के कुछ पहले ही जवाहरलाल नेहरू और उनके सहयोगियों ने **'नागरिक स्वतंत्रता संघ'** की स्थापना की थी। यह जनता के बीच में संदेश पहुँचाने में सफल रहा था। 1947 में मद्रास (चेन्नई) में

गठित नागरिक स्वतंत्रता संगठन ने भी लगभग यही रास्ता अपनाया। 1972 में कलकत्ता (कोलकता) में प्रजातांत्रिक अधिकारों के लिए एक संघ बना। 1974 में आन्ध्र नागरिक स्वतंत्रता समिति का गठन किया गया। जयप्रकाश नारायण के नेतृत्व में नागरिक एवं लोकतांत्रिक अधिकारों के बहाल किए जाने की माँग के कारण भारत में मानवाधिकारों का मुद्दों तीव्र गति से उठने लगा। भारत के कई राज्यों में मानव अधिकार संगठनों का उदय हुआ। प्रजातंत्र के लिए नागरिक दिल्ली में, बाम्बे (मुम्बई) में प्रजातांत्रिक अधिकारों की सुरक्षार्थ समिति, बिहार में मुक्त विधिक सहायता समिति का गठन किया गया था।

1983 के पूर्ववर्ती वर्षों में अल्पसंख्यक आयोग ने सरकार से एक राष्ट्रीय एकाकरी–मानवाधिकारवादी आयोग गठन करने की सिफारिश की। अल्पसंख्यक आयोग ने सरकार से इस आयोग को संविधानिक अधिकार दिए जाने की भी माँग की। भारत तथा प्रत्येक राज्यों में एक राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग गठित करने का सुझाव लक्ष्मीकार सिंघवी जैसे न्यायविद् ने 1988 में दिया। 1991 के कांग्रेसी चुनाव घोषणा–पत्र में राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग गठित करने का वादा किया गया। पूर्व प्रधानमंत्री नरसिम्हाराव ने स्पष्ट रूप से घोषणा की कि किसी भी तरह के मानव अधिकारों के हनन को सहन नहीं किया जा सकता है। 24 अप्रैल, 1992 को कांग्रेस प्रवक्ता विट्ठल नरहरि गाडगिल ने यह घोषणा की कि राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग के गठन, भूमिका और प्रकृति के बारे में एक राष्ट्रीय चर्चा होनी चाहिए और वास्तविक स्थिति को ध्यान में रखते हुए जरूरी है कि राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग का गठन किया जाए।

हिमाचल प्रदेश, राजस्थान और मध्यप्रदेश के भाजपाई मुख्यमंत्रियों ने सलाह दी कि एक ही राष्ट्रीय आयोग अल्पसंख्यक, पिछड़े, अनुसूचित–जनजाति आयोगों के कार्यों के साथ तालमेल कर सकता है। राजनीतिक नेताओं की यह महत्वपूर्ण सलाह है जिसके कारण केंद्रीय सरकार इस दिशा में कदम उठाने के लिए मानसिक रूप से तैयार हुई। अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर मानव अधिकारों के बारे में गतिविधि और तेज हो गयी। अतः विश्व की स्थिति को देखते हुए निम्नलिखित मुद्दों की वजह से राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग गठित करने की आवश्यकता हुई–

(1) राज्य के स्तर पर तथा सामाजिक–आर्थिक समस्याओं के कारण भारत में मानव अधिकारों का हनन बहुत हो रहा है।

(2) साम्प्रदायिक दंगे, जातिवादी हिंसा, जमींदारों, पूँजीपतियों द्वारा शोषण एवं आतंकवाद अभी भी भारत के लिए गहरी चुनौती हैं। सरकार ने इसलिए फैसला किया कि इन घटनाओं को एकत्रित तथा खोजबीन करने वाला एक राष्ट्रीय आयोग जरूरी है।

(3) अंतराष्ट्रीय संस्थाओं, जैसे एमनेस्टी इंटरनेशनल, एशिया वाच, अंतर्राष्ट्रीय रेडक्रॉस जैसे मानव सेवी संस्थाओं की आलोचना ने भारत सरकार को इस दिशा में सोचने के लिए बाध्य किया। पंजाब और जम्मू, कश्मीर, बिहार, उत्तरप्रदेश, तामिलनाडु जैसे राज्यों एवं उत्तरपूर्व को लेकर अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर भारत की काफी आलोचना हो रही थी। इसलिए भारत सरकार ने राष्ट्रीय स्तर पर हो रहे पुलिस अत्याचारों के बारे में जानकारी हेतु एक आयोग के गठन करने का फैसला लिया।

(4) 'कश्मीर' समस्या को लेकर सम्मेलनों में भारत पर मानव अधिकार उल्लंघन का आरोप लगाया गया।

1993 के भारत के साथ विकास एवं सहयोग संधि पत्र पर हस्ताक्षर करते हुए यूरोपीय समुदाय ने भी इस बात पर बल दिया।

राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर मानव अधिकारों की सुरक्षा एवं विकास को लेकर बढ़ती चिंता के कारण भारत सरकार ने मानव अधिकार स्थापित करने की दिशा में बढ़ी संयुक्त राष्ट्र संघ तथा अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष एवं अन्य देशों ने आर्थिक सहायता के लिए अच्छी मानव अधिकार दशाओं की शर्तें रखीं।

भारत में न्याय प्रक्रिया बहुत धीमी है जिसका सामान्य अर्थ यह है कि **'विलम्ब न्याय को नष्ट करता'** है इसलिए राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग इस क्षेत्र में एक अन्य उपचारिक विकल्प हो सकता है।

भारतीय न्यायपालिका के तमाम निर्णय, विधि आयोग के सुझाव, राष्ट्रीय पुलिस आयोग के सुझाव एवं हमारी उच्च न्यायालयों के निर्णय जो मानव अधिकारों को विकसित एवं सुरक्षित करने वाले थे, भी एक तरह से भारत सरकार को इस दिशा में आगे बढ़ने के लिए अभिप्रेरित कर रहे थे।

उपर्युक्त चुनौतियों के बावजूद भारत एक लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था वाला देश बन रहा है। इस एवं सम्मान को बचाने के लिए भारत के लिए यह जरूरी था कि राष्ट्रीय स्तर पर देखभाल के लिए राष्ट्रीय मानव अधिकर आयोग गठित किया जाये। ऐसी परिस्थिति में

भारत भी इन देशों से अभिप्रेरित इन सभी बिन्दुओं को ध्यान में रखते हुए भारत सरकार ने मानव अधिकार आयोग संबंधी विधेयक मई, 1992 को लाकसभा में रखा। विधेयक स्थायी समिति को सौंप दिया गया। 28 सितम्बर, 1993 राष्ट्रपति द्वारा मानव अधिकार संबंधी अध्यादेश जारी किया गया। आयोग का गठन 12 अक्टूबर, 1993 को मानव अधिकार संरक्षण अध्यादेश के तहत किया गया था।

मानव अधिकार आयोग की संरचना
(Structure of Human Right Commission)

मानव अधिकार आयोग की संरचना का कार्य केन्द्रीय सरकार करेगी। अधिनियम के अनुसार मानवीय अधिकारों का राष्ट्रीय कमीशन की संरख्ना केन्द्रीय सरकार करेगी। कमीशन की संरचना निम्नलिखित प्रकार से होगी–

(a) अध्यक्ष या सभापति जो उच्चतम न्यायालय का मुख्य न्यायमूर्ति रहा है;

(b) एक सदस्य जो उच्चतम न्यायालय का न्यायाधीश है या जो रहा है;

(c) एक सदस्य जो उच्च न्यायालय का मुख्य न्यायाधीश है या जो रहा है;

(d) दो सदस्यों की नियुक्ति ऐसे व्यक्तियों में से हो जिन्हें मानव अधिकारों का ज्ञान या व्यावहारिक ज्ञान है।

मानवाधिकार आयोग के अनुसार धारा 3 (2) (घ) के अनुसार, दो सदस्यों की नियुक्ति ऐसे व्यक्तियों में से होगी जिन्हें मानव अधिकारों का ज्ञान या व्यावहारिक ज्ञान है। हाल के एक वाद, **पीपुल्स यूनियन फार सिविल लिबर्टीज बनाम भारतीय संघ तथा अन्य** (People Union for Civil Liberties v. Union of India and anothers) में उच्चतम न्यायालय के तीन न्यायमूर्तियों की पीठ के सम्मुख विचारधीन प्रश्न यह था कि क्या एक पूर्व पुलिस अधिकारी कमीशन का सदस्य हो सकता है। इस मामले में सेवानिवृत्त पुलिस अधिकारी जो सी.की.आई. का डायरेक्टर तथा इन्टरपोल (एशिया) का उपाध्यक्ष रह चुका था, के सदस्य चुने जाने को रिट याचिका द्वारा चुनौती दी गई थी। याचिकादता का तर्क था कि अधिनियम के उद्देश्य तथा पुलिस की जनता में छवि को देखते हुए धारा 3 (2) (घ) का निर्वचन इस प्रकार किया जाना चाहिये कि सेवानिवृत्त पुलिस अधिकारियों को कमीशन का अध्यक्ष न बनाया जाये। परन्तु उच्चतम न्यायालय ने इस तर्क को स्वीकार नहीं किया। उच्चतम न्यायाय ने अपने निर्णय में कहा कि धारा की स्पष्ट भाषा को किसी लोक द्वेष या बोध (Prejudice of perception) से विकृत या तोड़ा–मरोड़ा नहीं जा सकता है। धारा किसी वर्ग के लोगों को अपवर्जित नहीं करती है, यदि उनमें मानव अधिकारों का ज्ञान या व्यावहारिक अनुभव है। ऐसे किसी स्पष्ट एवं विनिर्दिष्ट अपवर्जित उपलब्ध की अनुपस्थिति में न्यायालय को इसे सामान्य उपबन्ध ही समझना चाहिये।

उपर्युक्त सदस्यों के अतिरिक्त धारा 12 के क्लाज (ख) से (ज) में उल्लिखित कार्यों के सम्पादन के लिये अल्पसंख्यकों के राष्ट्रीय कमीशन, अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों के राष्ट्रीय कमीशन तथा महिलाओं के अध्यक्ष भी सदस्य माने जायेंगे। इस प्रकार राष्ट्रीय कमीशन में कुल 8 सदस्य होंगे। कमीशन का एक महासचिव होगा जो मुख्य कार्यवाही अधिकारी होगा तथा कमीशन द्वारा प्रत्यायोजित कार्य करेगा।

मानव अधिकार आयोग का मुख्यालय–

मानव अधिकारों के राष्ट्रीय कमीशन का मुख्यालय दिल्ली में स्थित है। केन्द्रीय सरकार के पूर्व अनुमोदन से कमीशन भारत के अन्य स्थानों पर भी अपने कार्यालय स्थापित कर सकती है। साधारणतया कमीशन अपनी मीटिंग आदि दिल्ली स्थित कार्यालय में करेगी! परन्तु अपने विवेकानुसार, कमीशन अपनी मीटिंग भारत के अन्य स्थानों पर भी कर सकता है।

आयोग के अध्यक्ष एवं सदस्यों की नियुक्ति–

कमीशन के अध्यक्ष एवं सदस्यों की नियुक्ति राष्ट्रपति एक समिति की संस्तुतियों पर करेगा। इस समिति के सदस्य निम्नलिखित होंगे–

(a) प्रधानमंत्री (अध्यक्ष);

(b) लोकसभा का अध्यक्ष (सदस्य);

(c) गृहमंत्री (सदस्य);

(d) लोकसभा में विपक्ष का नेता (सदस्य);

उच्चतम न्यायालय के पदासीन न्यायाधीश या न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश की नियुक्ति भारत के मुख्य न्यायाधीश के साथ सलाह करके ही की जा सकेगी।

सदस्यों की पदावधि–

अध्यक्ष के पद पर नियुक्त व्यक्ति की पदावधि उस समय से पाँच वर्ष की होगी ज बवह पद ग्रहण करता है या ज बवह 70 वर्ष का हो जाता है, इसमें से जो भी पूर्व हो। तथा उसकी पुनः नियुक्ति 5 वर्ष की दूसरी पदावधि के लिये हो सकती है, परन्तु कोई भी व्यक्ति 70 वर्ष पूरा करने पर सदस्य नहीं बना रहेगा। कमीशन के अध्यक्ष या सदस्य के कार्यकाल की समाप्ति के पश्चात् वह केन्द्रीय या राज्य सरकार के किसी पद पर नियोजन के लिये अयोग्य होगा।

आयोग क किसी सदस्य का पद से हटाया जाना

अधिनियम के अनुसार, अध्यक्ष या किसी सदस्य को राष्ट्रपति के आदेश से सिद्ध दुर्व्यवहार या अक्षमता के आधार पर तभी हटाया जा सकता है जब राष्ट्रपति के निर्देशित करने पर उच्चतम न्यायालय जाँच करके यह रिपोर्ट देता है कि अध्यक्ष या सदस्य को उक्त आधार पर हटाया जाना चाहिए।

उपर्युक्त उपबन्ध के बावजूद राष्ट्रपति अध्यक्ष या किसी सदस्य को आदेश द्वारा निम्नलिखित किसी आधार पर हटा सकता है–

a) दिवालिया घोषित होने पर; या

b) अपने पद की अवधि में अपने पद के अतिरिक्त किसी रोजगार करने पर; या

c) मस्तिष्क या शरीर की अयोग्यता के कारण कार्य करने में अयोग्य होना; या

d) किसी सक्षम न्यायालय द्वारा अस्वस्थ चित्त का घोषित होना; या

e) किसी अपराध के लिये सिद्धदोष या मुजरिम होना तथा जेल जाना जो राष्ट्रपति क`मत में अनैतिक है।

आयोग की प्रकिया

(Procedure of Commission)

आयोग अपनी मीटिंगें उस स्थान पर करेगा जहाँ अध्यक्ष ठीक समझता है। कमीशन अपनी प्रक्रियाा स्वयं नियमित। कमीशन द्वारा लिये गये निर्णयों को महासचिव या कमीशन का कोई अन्य अधिकारी जिसे इस सम्बन्ध में अध्यक्ष ने अधिकृत किया हो अधिप्रमाणित करेगा।

आयोग के कार्य

(Function of Commission)–

मानव अधिकार के संरक्षण के अधिनियम, 1993 के अनुसार

कमीशन निम्नलिखित सभी या इनमें से कोई कार्य सम्पन्न कर सकता है–

(1) स्वतः या पीड़ित व्यक्ति की ओर से किसी व्यक्ति द्वारा (1) मानव अधिकारों के उल्लंघन या उसके दुष्प्रेरण; या (2) किसी लोक सेवक द्वारा ऐसे उल्लंघन को रोकने में उपेक्षा के लिये याचिका पर जाँच।

(2) मानव अधिकारों के उल्लंघन से सम्बन्धित कोई ऐसी कार्यवाही में ऐसे न्यायालय की अनुमति से हस्तक्षेप करना जो उस न्यायालय में लम्बित है।

(3) मानव अधिकारों के संरक्षण के लिये संविधान या तत्समय प्रवत्त कोई विधि में दी गई सुरक्षा का पुनरीक्षण करने या उसके प्रभावशाली अनुपालन के लिये उपायों की संस्तुति देना।

(4) मानव अधिकार पर संधियों तथा अन्तर्राष्ट्रीय लिखितों का अध्ययन करके तथा उनके प्रभावशाली अनुपालन के लिये संस्तुतियाँ देना।

(5) प्रकाशन, माध्यम (Media), संगोष्ठी तथा अन्य अपलब्ध साधनों द्वारा मानवीय अधिकार साक्षरता का प्रसार समाज के विभिन्न अंगों में करना तथा इन अधिकारों के संरक्षण के लिये उपलब्ध संरक्षाओं की जागरूकता की प्रोन्नति करना।

(6) ऐसे अन्य कार्य जिन्हें कमीशन मानवीय अधिकारों की प्रोन्नति आवश्यक समझे।

(7) मानवीय अधिकारों के क्षेत्र में गैर–सरकारी संगठनों तथा संस्थाओं के प्रयासों को प्रोत्साहित करना।

(8) मानव अधिकारों के उपभोग में बाधक तत्व, जिनमें आतंकवाद के कृत्य भी सम्मिलित हैं, का पुनरीक्षण करने तथा उपयुक्त उपचार के उपाय की संस्तुति देना।

(9) राज्य सरकार को सूचना देकर राज्य सरकार के नियंत्रण में कोई जेल या अन्य संस्था जहाँ व्यक्ति निरूद्ध किये जाते हैं या इलाज, सुधार या संरक्षण के लिये रखे जाते है, उनके रहने की दशाओं का अध्ययन करने तथा उस पर संस्तुति करने के लिए जाकर निरीक्षण करना।

परन्तु कुछ मामले ऐसे हैं जो कमीशन का अधिकारिता के अन्तर्गत नहीं आते हैं। कमीशन किसी ऐसे मामले की जाँच नहीं कर सकती है जो राज्य कमीशन या अन्य किसी तत्समय या अन्य किसी तत्समय प्रवृत्त विधि द्वारा विधिवत स्थापित किसी अन्य कमीशन में लम्बित हों। इसके अतिरिक्त राष्ट्रीय कमीशन या राज्य कमीशन किसी ऐसे मामले की जाँच नहीं करेंगी जिसमें अभिकथित मानव अधिकारों के उल्लंघन की तिथि से एक वर्ष का समय बीत गया है। उच्चतम न्यायालय ने आयोग के कार्यों पर टिप्पणी करते हुए कहा कि मानव अधिकारों के राष्ट्रीय कमीशन के सदस्य उच्च न्यायालय में न्यायाधीश के रूप में कार्य कर चुके है तथा इसी प्रकार दो अन्य सदस्य जो उच्च न्यायालयों के मुख्य न्यायाधीश के रूप में कार्य कर चुके है तथा उन्होंने अपने पूर्ण कार्यकाल में मौलिक अधिकारों का निर्वचन करते है तथा उन्हें प्रवर्तित करते है। अतः अपने ढंग से यह

इस क्षेत्र के विशेषज्ञ हैं। कमीशन सच्चे अर्थों में एक विशेष निकाय है, जिसे संविधान के अनुच्छेद 32 के अन्तर्गत ऐसे मामले निर्देशित किये जा सकते है तथा ऐसा निदेशन मानव अधिकरों के संरक्षण अधिनियम के अन्तर्गत भी निषिद्ध नहीं है तथा इससे उच्चतम न्यायालय द्वारा जाँच के लिये निर्देशित वाद् से कमीशन की अधिकारिता पर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा।

जाँच से सम्बन्धित आयोग की शक्तियाँ–

मानव अधिकार संरक्षण अधिनियम के अन्तर्गत शिकायतों की जाँच करते समय कमीशन को वही शक्तियाँ प्राप्त होती हैं जो एक सिविल न्यायालय को सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5वाँ) के अन्तर्गत प्राप्त होती है तथा विशेषकर निम्नलिखित मामलों में –

a) गवाहों को बुलाने एवं उनकी उपस्थिति को सुनिश्चित करने तथा उनकी शपथ पर जाँच करने;

b) दस्तावेजों का प्रकटीकरण;

c) शपथ–पत्र पर साक्ष्य प्राप्त करना;

d) किसी लोक रिकार्ड या उसकी प्रतिलिपि किसी न्यायालय या अधिकारी से मँगाना;

e) गवाहों एवं दस्तावेजों की जाँच हेतु कमीशन जारी करना;

f) कोई अन्य मामला जो विहित हो।

कमीशन को यह भी शक्ति प्राप्त है कि वह किसी व्यक्ति, जिसे कोई विशेषाधिकार प्राप्त है तथा जो तत्समय प्रवृत्त विधि के अन्तर्गत उसका दावा कर सकता है, जो ऐसे मामले में सूचना देने को कह सकती है जो उसके मत में जाँच की विषयवस्तु के लिये उपयोगी या संगतपूर्ण होगा तथा ऐसा व्यक्ति माना जायेगा कि विधि के अन्तर्गत ऐसी सूचना देने को भारतीय दण्ड संहिता, (1860 का 45वाँ) की धाराओं 176 एवं 177 के अन्तर्गत बाध्य होगा।

यह भी उपबन्धित है कि आयोग को सिविल न्यायालय माना जायेगा तथा जब कोई भारतीय दण्ड संहिता, 1860 की धारा 175, धारा 178, धारा 179, धारा 180 या धारा 228 में वर्णित अपराध कमीशन की उपस्थिति में किया जाता है तो कमीशन अपराध के तथ्य तथा अभियुक्त या बयान दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 के अनुसार रिकार्ड करके मामले को अधिकारिता वाले मजिस्ट्रेट को अग्रेषित कर देगी तथा वह अभियुक्त विरूद्ध शिकायत की सुनवाई उसी प्रकार करेगी जैसे कि वाद दंड प्रक्रिया संहित, 1973 की धारा 346 के अन्तर्गत किया गया हो।

शिकायतों से निपटने के लिये प्रकिया
(Procedure to Solve the Complaints)–

मानव अधिकारों के अभिकथिक उल्लंघन से निपटने के लिये राष्ट्रीय मानव अधिकार आयोग (प्रक्रिया) विनियमन, 1994 के विनियमन 8 में निम्नलिखित प्रक्रिया दी गई है:

(1) सभी शिकायतों को चाहे वह जिस रूप में कमीशन द्वारा प्राप्त की गई हो, रजिस्ट्रीकृत की जायेगी, उन्हें ग्रहण करने हेतु एक संख्या दी जायेगी तथा उन्हें प्राप्ति के दो सप्ताह के पूर्व दो सदस्यों की पीठ के सम्मुख ग्रहण के लिये रखा जायेगा। आयोग के समक्ष अन्य परिस्थितियों में शिकायत नहीं की जा सकती।

(a) ऐसी घटनायें जो शिकायत करने के एक वर्ष पूर्व घटी थी।

(b)ऐसे मामले जो न्यायाधीन या निर्णयाधीन हों; या

(c) जो अस्पष्ट, अनाम या मिथ्यानाम से है; या

(d) जो बहुत साधारण या तुच्छ प्रकृति की हों;

(e) जो कमीशन के कार्यक्षेत्र के बाहर है।

(2) कमीशन द्वारा तुरन्त कार्यवाही हेतु शिकायत से सम्बन्धित पूरे मामलों की पूर्ण तस्वीर प्रकट करने का पूरा प्रयास किया जाना चाहिये तथा कमीशन को शिकायत अंग्रेजी या हिन्दी में की जानी चाहिये

(3) कमीशन को प्रारम्भ में ही किसी शिकायत को खारिज करने की शक्ति प्राप्त है।

(4) शिकायत स्वीकार होने पर अध्यक्ष/आयोग निर्देश देगी कि मामले की जाँच या खोजबीन होनी चाहिये।

(5) सम्बन्धित प्राधिकारी से टीका–टिप्पणी प्राप्त होने के पश्चात् कमीशन के विचारार्थ विस्तारपूर्वक एक नोट तैयार किया जायेगा।

(6) प्रत्येक शिकायत पर जिसमें अध्यक्ष या कमीशन ने जाँच या खेजबीन कराने का निर्णय लिया है, सचिवालय सम्बन्धित सरकार या प्राधिकारी से युक्तियुक्त समय में रिपोर्ट या टीका–टिप्पण माँगेगी।

(7) कमीशन अपने विवेकानुसार तार या फैक्स द्वारा भेजी गई शिकायतें स्वीकार कर सकता है।

(8) शिकायतों के लिये कोई फीस नहीं ली जाती है।

(9) कमीशन अधिनियम की धाराओं 18 तथा 19 के अनुसार अपने निदेशों एवं संस्तुतियों को सम्बन्धित सरकार या पेटीशनर को संसूचित करेगा।

(10) जहाँ खोजबीन कमीशन की टीम या दल या इसके विवेकानुसार किसी अन्य व्यक्ति द्वारा की जाती है तो इसके पूर्ण होने से एक सप्ताह या अतिरिक्त समय जिसको कमीशन अनुमति दे, के अन्दर प्रेषित हो जायेगी। कमीशन अपने विवेकानुसार किसी मामले में अतिरिक्त खोजबीन का निर्देश दे सकती है।

(11) कमीशन अपने विवेकानुसार पेटीशनर या उसके एवज में किसी अन्य व्यक्ति की व्यक्तिगत सुनवाई का अवसर प्रदान कर सकती है

तथा जहाँ आवश्यक हो कमीशन रिकार्ड मँगवा सकती है तथा गवाहों की जाँच कर सकता है।

(12) अध्यक्ष द्वारा प्रार्थना करने पर कमीशन या इसका कोई सदस्य घटना स्थल पर अध्ययन हेतु किया जा सकता है तथा जहाँ ऐसा अध्ययन एक या अधिक सदस्यों द्वारा किया जाता है, रिपोर्ट कमीशन द्वारा जितना शीघ्र सम्भव हो प्रस्तुत की जायेगी।

राज्य मानवाधिकार आयोग

(STATE HUMAN RIGHTS COMMISSION)

मानवाधिकार संरक्षण अधिनियम (पीएचआरए) 1993 की धारा 21 में सभी राज्यों में भी राज्य मानवाधिकार आयोगों (एसएचआरसी) के गठन का प्रावधान है। राज्यों में मानवाधिकार आयोग की मौजूदगी और कार्यकरण मानवाधिकारों के संरक्षण की बेहतरी में बहुत कारगर एवं प्रभावी साबित होगा। अब यह स्वीकृत मत है कि अच्छा शासन और मानवाधिकार साथ–साथ चलते रहते हैं।

राज्य सरकारों से मिली सूचना के अनुसार दिनांक 31.03.2014 तक 24 राज्यों ने राज्य मानवाधिकार आयोग (एचएचआरसी) का गठन कर लिया है। ये राज्य हैं– आंध्र प्रदेश, असम, बिहार, छत्तीसगढ़, गुजरात, हिमाचल प्रदेश, कर्नाटक, केरल, जम्मू कश्मीर, झारखण्ड, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, मणिपुर, ओडिशा, पंजाब, राजस्थान, सिक्किम, तमिलनाडु, उत्तर प्रदेश, उत्तर प्रदेश, उत्तराखण्ड, हरियाणा, गोवा, पश्चिम बंगाल और मेघालय।

राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग भी इस बात के लिए बेहद उत्सुक है कि मानवाधिकार आयोग सभी राज्य में गठित किए जांए, ताकि प्रत्येक नागरिक के लिए, चाहे उसकी संस्कृति कोई भी हो, अथवा उसके द्वारा बोली जाने वाली भाषा कोई भी हो। मानवाधिकार आयोग सहयोग और भागीदारी के क्षेत्रों का पता लगाने और उनको और अधिक सुदृढ़ बनाने के लिए राज्य मानवाधिकार आयोगों के साथ नियमित बातचीत करता है।

अधिनियम में अलग–अलग राज्य सरकारों द्वारा राज्य मानवाधिकर आयोग के गठन के लिए समर्थकारी व्यवस्था भी है। राज्य मानवाधिकार आयोग में:

(क) एक अध्यक्ष, जो किसी उच्च न्यायालय का मुख्य न्यायाधीश रह चुका हो,

(ख) एक सदस्य, जो किसी उच्च न्यायालय का न्यायाधीश है या रह चुका हो,

(ग) एक सदस्य, जो किसी राज्य के जिला न्यायालय में न्यायाधीश है या रह चुका हो,

(घ) दो सदस्य, जो मानवाधिकारों से सम्बन्धित मामलों का ज्ञान या व्यावहारिक अनुभव रखने वाले लोगों में से नियुक्त किए जाएंगे शामिल होंगे।

एक सचिव होगा, जो राज्य आयोग का मुख्य कार्यपालक अधिकारी होगा और जो राज्य आयोग द्वारा प्रदत्त अधिकारों का प्रयोग तथा सौंपे गए कार्यों का सम्पादन करेगा। राज्य आयोग का

मुख्यालय राज्य द्वारा जारी एक अधिसूचना द्वारा निर्दिष्ट स्थान में होगा।

राज्य आयोग का गठन

(Constitution of State Commission)

आयोग का अध्यक्ष और उसके सदस्य राज्य सरकार द्वारा एक समिति की सिफारिशों पर नियुक्त किए जाएंगे। इस समिति की रचना निम्नलिखित प्रकार से होगी:

(क) मुख्यमन्त्री – अध्यक्ष

(ख) विधानसभा का अध्यक्ष – सदस्य

(ग) सम्बन्धित राज्य के गृह विभाग का प्रभारी मन्त्री – सदस्य

(घ) विधानसभा में विपक्ष का नेता – सदस्य

(ड़) विधान परिषद सभापति – सदस्य

(च) विधान परिषद में विपक्ष का नेता – सदस्य

जिस राज्य में विधान परिषद् हो वहां विधान परिषद् में विपक्ष का नेता भी नियुक्ति समिति का सदस्य होगा। सम्बन्धित राज्य के उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश से परामर्श किए बिना किसी

अच्च न्यायाय या जिला न्यायालय के पीठासीन को आयोग में नियुक्त नहीं किया जाएगा।

राज्य आयोग के अध्यक्ष या अन्य सदस्य को केवल राष्ट्रपति द्वारा राष्ट्रपति आयोग के सन्दर्भ में निर्दिष्ट तत्सम्बन्धी प्रक्रिया के अनुसार, ही उसके पद से हटाया जा सकता है। अध्यक्ष या सदस्य का कार्यकाल उसके पदभार संभालने के दिन से पांच वर्ष पूरे होने या उसके 70 वर्ष की आयु के होने में से जो दिन पहले आए उस दिन तक के लिए होगा। पद–मुक्त होने के बाद अध्यक्ष या सदस्य राज्य सरकार या केन्द्र सरकार के अधीन नियुक्त किए जाने के लिए अपात्र होगा।

राज्य आयोग के अधिकारी और कर्मचारी

सम्बन्धित राज्य सरकार राज्य आयोग को कम–से–कम राज्य सरकार के सचिव के दर्जे का एक अधिकारी उपलब्ध कराएगी। यह अधिकारी राज्य आयोग का सचिव होगा। इसके अतिरिक्त वह आयोग को कम–से–कम मुलिस महानिरीक्षक के दर्जे के एक अधिकारी के अधीन काम करने के लिए पुलिस और अन्वेषण कर्मचारी तथा ऐसे अन्य अधिकारी और कर्मचारी उपलब्ध कराएगी जो राज्य आयोग के कार्यों के सफल निष्पादन के लिए आवश्यक हों। राज्य आयोग ऐसे अन्य प्रशासनिक, तकनीकी और वैज्ञानिक कर्मचारियों की नियुक्ति कर सकता है जिसे नियुक्त करना वह आवश्यक समझे।

राज्य आयोग के कार्य

(Function of State Commission)

राज्य आयोग केवल संविधान की सातवीं अनुसूची की सूची 2 (राज्य सूची) और 3 (समवर्ती सूची) में उल्लिखित प्रविष्टियों से सम्बन्धित मामलों के बारे में ही मानवाधिकारों के उल्लंघन की जांच कर सकता है, लेकिन यदि ऐसे किसी मामले की जांच पहले से ही राष्ट्रीय आयोग या कोई अन्य वैधानिक आयोग कर रहा हो तो राज्य आयोग उसके सम्बन्ध में जांच नहीं करेगा। इस मर्यादा के साथ, आयोग के अधिकार, जांच की कार्य–विधि, अन्वेषण और तत्पश्चात् उसके द्वारा उठाए जाने वाले कदम राष्ट्रीय आयोग के तुल्य हैं।

मानव अधिकार अधिनियम, 1993 के संरक्षण के अनुसार राज्य मानव अधिकार आयोग के निम्नलिखित कार्य है–

(i) मानव अधिकार के उल्लंघन की जांच करना अथवा किसी लोक सेवा के समक्ष प्रस्तुत मानव अधिकार उल्लंघन की प्रार्थना जिसकी वह अवहेलना करता हो, कि जांच स्वप्रेरणा या न्यायालय के आदेश से करना।

(ii) मानव अधिकार की रक्षा हेतु बनाये गये संवैधानिक व विधिक उपबन्धों की समीक्षा करना तथा इनके प्रभावी क्रियान्वयन हेतु उपायों की सिफारिशे करना।

(iii) मानव अधिकार के क्षेत्र में शोध करना और इसे प्रोसाहित करना।

(iv) लोगों के बीच मानव अधिकारों की जानकारी फैलाना एवं उसकी सुरक्षा के लिए उपलब्ध उपायों के प्रति जागरूक करना।

(v) मानव अधिकारों के क्षेत्र में कार्यरत गैर सरकारी संगठनों के प्रयासों की सराहना करना।

(vi) आतंकवाद सहित उन सभी कारणों की समीक्षा करना जिससे मानव अधिकारों का उल्लंघन होता है। एवं इनके बचाव हेतु उपायों की सिफारिश करना।

(vii) मानव अधिकारों से संबन्धित अन्तर्राष्ट्रीय संधियों व दस्तावेजों का अध्ययन एवं उनको प्रभावशाली तरीके से लागू करने हेतु सिफारिश करना।

(viii) जेलों में जाकर कैदियों की स्थिति का अध्ययन करना व इसके बारें में सिफारिश करना।

(ix) न्यायालय में लंबित किसी मानव अधिकार से संबंधित कार्यवाही में हस्तक्षेप करना।

(x) ऐसे आवश्यक कार्यों को करना, जो कि मानव अधिकारों के प्रचार व प्रोत्साहन के लिए आवश्यक हो।

राज्य आयोग के अधिकार एवं शक्तियाँ

(Rights and Powers of State Commission)

राज्य आयोग की अधिकार

(i) आयोग के पास अपनी प्रक्रिया को नियंत्रित करने का अधिकार निहित है।

(ii) आयोग के पास सिविल अदालत के सभी अधिकार होते हैं और इसकी कार्यवाही में एक न्यायिक प्रतिष्ठा होती है।

(iii) यह राज्य सरकार या किसी अन्य प्राधिकारी के अधीनस्थ से जानकारी या रिपोर्ट प्रस्तुत करने के लिए कह सकता है।

(iv) आयोग के पास तत्समय प्रभाव के लिए किसी भी व्यक्ति को किसी भी विशेषाधिकार के अधिन जो किसी भी कानून के तहत हो पूछताछ करने का अधिकार है।

(v) राज्य आयोग सार्थक मसलों पर पुछताछ से संबन्धित मसलों पर जानकारी पेश करने का अधिकार है साथ ही इसके होने के एक वर्ष के भीतर आयोग इस मामले पर गौर कर सकता है।

राज्य आयोग की शक्तियाँ

(i) समन जारी करने की शक्ति।

(ii) गवाही को रिकॉर्ड करने की शक्ति।

(iii) देश के विभिन्न जेलों का निरीक्षण करने की शक्ति।

(iv) शपथ पत्र या हलफनामे पर लिखित गवाही लेने की शक्ति।

आयोग की वार्षिक और विशेष रिपोर्ट

राज्य आयोग सम्बन्धित राज्य सरकार के समक्ष अपनी वार्षिक रिपोर्ट, और यदि वह किसी मामले को इतना अविलम्बनीय और महत्वपूर्ण मानता है तो उसके सम्बन्ध में विशेष रिपोर्ट भी प्रस्तुत करेगा। राज्य सरकारों का यह अनिवार्य कर्तव्य है कि वे राज्य मानवाधिकार आयोग की वार्षिक तथा विशेष रिपोर्ट अपने–अपने विधानमण्डल के पटल पर रखें।

मानवाधिकार न्यायालय

इस अधिनियम में मानवाधिकार के उल्लंघनों से सम्बन्धि अपराधों की दुत सुनवाई के प्रयोजन के लिए भी व्यवस्था की गई है। राज्य सरकारें अपने यहां के उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश की सहमति से प्रत्येक जिला सत्र न्यायालय को मानवाधिकारों से सम्बन्धित अपराधों के मुकदमों की सुनवाई करने वाले मानवाधिकार न्यायालय के रूप में भी नामांकित कर सकता है। प्रत्येक मानवाधिकार न्यायालय के लिए राज्य सरकार एक सरकारी वकील नामांकित करेगी या उस न्यायालय में मानवाधिकारों से सम्बन्धित मुकदमों के संचालन के लिए कम–से–कम सात वर्ष के अनुभव वाले किसी एडवोकेट को विशेष सरकारी वकील नियुक्त करेगी।

वित, लेखा और लेखा–परीक्षा

यथोचित विनियोग की अनुमति प्राप्त करने के बाद केन्द्र सरकार और सम्बन्धित राज्य सरकार इस अधिनियम के प्रयोजनों के निमित्त उपयोग करने के लिए आवश्यक धन, अनुदानों के रूप में

क्रमशः राष्ट्रीय आयोग और सम्बन्धित राज्य आयोग को सुलभ करा देंगी। आयोग के लेखे भारत के महालेखापाल तथा लेखा–परीक्षक के परामर्श से तय की गइ उपयुक्त विधियों के अनुसार रखे जाएंगे और उक्त पदाधिकारी या उसके द्वारा नियुक्त कोई और अधिकारी उन लेखों की परीक्षा करेगा। महालेखापाल तथा लेखा–परीक्षा रिपोर्ट के साथ, यदि वे राष्ट्रीय आयोग के लेखे हैं, तो सम्बन्धित राज्य सरकार द्वारा अपने राज्य के विधानमण्डल के पटलों पर रखे जाएंगे।

विविध

राष्ट्रीय आयोग और राज्य आयोग ऐसे किसी मामले की जांच नहीं करेंगे, जो किसी राज्य आयोग या राष्ट्रीय आयोग के समक्ष अथवा किसी वैधानिक आयोग के समक्ष लम्बित हो।

यदि सरकार आवश्यक समझे तो किसी कानून की चाहे जो व्यवस्था हो, उसके बन्धन को न मानते हुए, मानवाधिकारों के उल्लंघनों के सम्बन्ध में किए गए अपराधों की जांच तथा उसके सम्बन्ध में मुकदमा चलाने के लिए अपेक्षित संख्या में पुलिस अधिकारियों से एक या अधिक विशेष अन्वेषण दल गठित कर सकती है। केन्द्र सरकार और सम्बन्धित राज्य सरकार इस अधिनियम की व्यवस्थाओं के कार्यान्वयन के लिए नियम बना सकती हैं। राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग के सन्दर्भ में इस प्रकार बनाए नियमों को 30 दिनों की अवधि के लिए संसद के प्रत्येक सदन के पटल पर रखा जाएगा और राज्य आयोग के सन्दर्भ में बनाए गए नियमों को इसी प्रकार सम्बन्धित राज्य विधानमण्डल के सदन/सदनों के पटल/पटलों पर रखा जाएगा।

निष्कर्ष

वर्ष 1993 में बने राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग ने भी अपनी स्थापना के बाद लम्बा सफर तय कर लिया है, लेकिन यह सफर बहुत नहीं कहा जा सकता। जिन उद्देश्यों को लेकर इसकी स्थापना की गई थी और इसकी स्थापना के समय जो समने देखे गए थे वे सभी तकरीबन अधूरे रह गए हैं। देश के हर हिस्से में होने वाले हर तरह के मानवाधिकार हनन पर काबू पाने के लिए इसकी स्थापना की गई थी। संविधान के अनुच्छेद 21 के अन्तर्गत हर नागरिक को सम्मान से जीने के अधिकार की रक्षा करने के लिए यह महत्वपूर्ण कारण तो यह रहा कि इसे वे अधिकार नहीं दिए गए, जिनकी इसको जरूरत थी। यह ऐसी संस्था बनकर रह गई, जो मानवाधिकारों के हनन पर पीड़ा तो व्यक्त कर सकती है, लेकिन इसके दोषियों को सजा नहीं दे सकती। इसका नतीजा यह होता है कि किसी को इसका भय नहीं रहता।

राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग की सबसे बड़ी बाधा उसका नख–दन्तविहीन होना है। उसे अपराधियों के खिलाफ मामले दर्ज करने, उनकी सुनवाई करने और दोषी पाए जाने वाले लोगों को सजा देने का अधिकार नहीं है। अगर दिल्ली से लेकर जिला स्तर तक राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग का गठन हो जाए और इनको ये अधिकार दिए जाएं ि कवे अपराधियों की पहचान कर उन्हें सजा दे सकें या कम–से–कम अपने स्तर पर जुर्माना भी कर सकें तो लाग इसका भय खाने लगेंगे।

यह जरूर है कि पीड़ित व्यक्ति का इस संस्था से संबल बढ़ा है। जहां कोई व्यक्ति मानवाधिकार उल्लंघन करता है वहां तो राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग की धौंस एक सीमा तक चल भी जाती है, लेकिन जहां संस्थागत रूप से उल्लंघन होता है; जैसे–फैक्ट्रियों में, कार्यस्थलों पर सरकारी विभागों में अनेक ऐसे कार्य होते है, जो खुल्लम–खुल्ला मानवाधिकार हनन की श्रेणी में आते हैं, लेकिन उन्हें राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग काबू नहीं कर पाता है।

यद्यपि मानवाधिकार आयोग पर्याप्त अधिकारों के अभाव में अभी तक प्रभावी ढ़ंग से उपनी भूमिका नहीं निभा पा रहा है फिर भी एक हद तक सन्तोष की बात यह है कि मीडिया में आए उछाल से या स्वतंत्र मानवाधिकार संगठनों की मेहनत से यह तो हुआ है कि आज मानवाधिकार व्यापक चर्चा का विषय बन गए हैं। इनकी ,खबरें छपती हैं और समाज में इन्हें स्वीकार किया जाने लगा है। हालांकि अभी इससे स्थिति पूरी तरह बदली नहीं है, लेकिन लोगों में जागरूकता जरूर आ रही है। अगर लोगों को उनके अधिकारों के बारे में और शिक्षित किया जाए तो कार्य ज्यादा आसान हो जाएगा।

अध्याय

उच्च न्यायालय और राज्य स्तर पर न्याय व्यवस्था

High Courts and the Judicial System at the State Level

परिचयः
(Introduction)

साधारणतया संघ राज्यों में न्यायपालिका का दोहरा ढांचा होता है, किन्तु भारत एक संघ राज्य होते हुए भी इसमें इकहरी न्यायपालिका को अपनाया गया है। न्यायपालिका के इस इकहरे ढांचे के अन्तर्गत उच्चतम स्तर पर सर्वोच्च न्यायलय स्थित है, इस सर्वोच्च न्यायालय के अधीन राज्यों के उच्च न्यायालय तथा इन उच्च न्यायालयों के अधीन जिलों के न्यायालय तथा अन्य छोटे–छोटे दीवानी और फौजदारी न्यायालय हैं।

उच्च न्यायालय
(High Courts)

उच्च न्यायालय राज्य का प्रमुख ल्यायालय होता है। संविधान के अनुसार एक ही उच्च न्यायालय का अधिकार–क्षेत्र दो या दो से अधिक राज्यों या संघीय क्षेत्र तक विस्तृत हो सकता हैं 1955 के राज्य पुनर्गठन अधिनियम के द्वारा कलकत्ता उच्च न्यायालय का क्षेत्राधिकार अण्डमान तथा निकोबार द्वीपों और केरल उच्च न्यायालय का अधिकार क्षेत्र लक्षद्वीप, अमीनद्वीप तथा मिनोकोय तक विस्तृत कर दिया गया है। संविधान के 27वें संशोधन द्वारा राज्यों का जो पुनर्गठन किया गया और उत्तरी–पूर्वी क्षेत्रीय परिषद् की जो स्थापना की गयी, उसके अन्तर्गत असम, नगालैण्ड, मणिपुर, त्रिपुरा और मेघालय इन 5 राज्यों तथा दो संघीय क्षेत्रों (अरूणाचल प्रदेश और मिजोरम प्रदेश) के लिए एक ही उच्च न्यायालय 'गोहाटी उच्च न्यायालय' की व्यवस्था की गयी है। राज्यों में उच्च न्यायालय की स्थापना या उससे सम्बन्धित व्यवस्था में परिवर्तन का अधिकार संसद को प्राप्त है।

मध्य प्रदेश में उच्च न्यायालय का मुख्य कार्यस्थान जबलपुर है तथा इसकी दो स्थायी बैंचें इन्दौर तथा ग्वालियर में भी है।

उच्च न्यायालयों का संगठन
(Constitution of High Courts)

(1) न्यायाधीशों की नियुक्ति—प्रत्येक उच्च न्यायालय में एक प्रमुख न्यायाधीश व अन्य न्यायाधीश होंगे, जिनकी संख्या निश्चित करने का अधिकार राष्ट्रपति भारत के मुख्य न्यायाधीश और उस राज्य के राज्यपाल के परामर्श से करेंगे तथा अन्य न्यायाधीशों की नियुक्ति में उस राज्य के मुख्य न्यायाधीश का परामर्श भी लेना होगा। भारत के मुख्य न्यायाधीश उच्च न्यायालयों में न्यायाधीशों की नियुक्ति व स्थानान्तरण के सम्बन्ध में 'सर्वोच्च न्यायालय के चार वरिष्ठतम न्यायाधीशों के समूह' की सर्वसम्मत राय के आधार पर ही राष्ट्रपति को परामर्श देंगे।

अस्थायी न्यायाधीशों की नियुक्ति

यदि किसी उच्च न्यायालय में कुछ समय के लिए कार्य बढ़ जाये तो राष्ट्रपति उसके स्थान पर किसी व्यक्ति को अस्थायी तौर पर न्यायाधीश के पद पर नियुक्त कर सकता है।

संविधान के अनुच्छेद 224 के अनुसार मुख्य न्यायाधीश को यह अधिकार दिया गया है कि आवश्यकता पड़ने पर वह राष्ट्रपति की पूर्व अनुमति लेकर किसी उच्च न्यायालय के किसी भी अवकाश प्राप्त न्यायाधीश को **'तदर्थ न्यायाधीश'** (Adhoc Judge) के रूप में कार्य के लिए बुला सकता है।अब इन्हें राज्य का दर्जा प्राप्त हो गया है।

इस प्रकार गौहाटी उच्च न्यायालय का अधिकार क्षेत्र 7 राज्यों तक विस्तृत है।

उच्च न्यायालय और राज्य स्तर पर न्याय व्यवस्था

(2) न्यायाधीशों की योग्यताएं

उच्च न्यायालयों का पद प्राप्त करने के लिए निम्न योग्यताएं आवश्यक हैः

(i) वह भारत का नागरिक हो।

(ii) वह कम से कम दस वर्ष तक भारत के किसी क्षेत्र में न्याय सम्बन्धी पद पर कार्य कर चुका हो अथवा एक या एक से अधिक उच्च न्यायालय का लगातार 10वर्ष तक अधिवक्ता (Advocate) रह चुका हो।

(3) न्यायाधीशों के वेतन और भत्ते

संविधान के अनुच्छेद 221 के अनुसार उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों को ऐसे वेतन दिये जायेंगे, जो संसद विधि द्वारा निर्धारित करे। ये वेतन और भत्ते राज्य की संचित निधि से दिये जाते हैं और न्यायाधीशों की नियुक्ति के बाद उनके वेतन तथा भत्तों में कोई अलाभकारी परिवर्तन नहीं किया जा सकता।

1998 में उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों के वेतन में आवश्यक सुधार किया गया है। अब उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश को वर्तमान 80 हजार रू. प्रति माह तथा अन्य न्यायाधीशों को 70 हजार रू. प्रति माह वेतन प्राप्त होता है। इसके अतिरिक्त न्यायाधीशों को निवास स्थान, मासिक भत्ता, यात्रा भत्ता, मनोरंजन भत्ता, स्टाफ कार, सीमित मात्रा में पेट्रोल तथा अन्य कुछ आवश्यक सुविधाएं प्राप्त होती हैं। न्यायाधीशों के लिए पेशन व

सेवा निवृत्ति वेतन (ग्रेच्युटी) की व्यवस्था सर्वप्रथम 1976 ई. में की गई थी और 1998 में उनकी पेंशन, सेवा निवृत्ति वेतन व अन्य सेवा शर्तों में आवश्यक सुधार किये गये हैं।

(4) न्यायाधीशों का कार्यकाल

उच्च न्यायालय के न्यायाधीश का कार्यकाल 62 वर्ष आयु तक निश्चित किया गया है, पर इसके पूर्व वह स्वयं पद त्याग कर सकता है। इसके अतिरिक्त, यदि संसद के दोनों सदन अलग–अलग अपनी समस्त संख्या के बहुमत से किसी न्यायाधीश को अयोग्य या दुराचारी प्रमाणित करें और ऐसा प्रस्ताव राष्ट्रपति के सम्मुख रखें, तो राष्ट्रपति के आदेश से उसे अपना त्याग देना होगा। संसद द्वारा यह प्रस्ताव एक ही अधिवेशन में रखा जाना चाहिए।

(5) न्यायाधीशों का स्थानान्तरण

राष्ट्रपति को यह भी अधिकार प्राप्त है कि वह उच्च न्यायालय के किसी न्यायाधीश का किसी अन्य उच्च न्यायालय में स्थानान्तरण कर सकता है।

उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों के स्थानान्तरण के सम्बन्ध में केन्द्र सरकार द्वारा या न्यायिक क्षेत्र में सर्वोच्च पद पर आसीन व्यक्ति द्वारा मनमाना आचरण न किया जा सके इस दृष्टि से अक्टूबर 98 में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा घोषित निर्णय में व्यवस्था की गई है कि राष्ट्रपति भारत के मुख्य न्यायाधीश से प्राप्त परामर्श के आधार पर कार्य करेंगे, लेकिन मुख्य न्यायाधीश स्वयं 'सर्वोच्च न्यायालय के चार वरिष्ठतम न्यायाधीशों के समूह' की सर्वसम्मत राय के आधार पर ही राष्ट्रपति को परामर्श देंगे। 1998 में की गई यह व्यवस्था निश्चित रूप से श्रेष्ठ है।

(6) न्यायाधीशों पर प्रतिबन्ध

संविधान के **अनुच्छेद** 200 के अनुसार उच्च न्यायालय का कोई स्थायी न्यायाधीश पद निवृत्ति के बाद उच्च न्यायालय में या उस न्यायालय के किसी अधीनस्थ न्यायालय में भी वकालत नहीं कर सकता है। वह अन्य उच्च न्यायालयों या सर्वोच्च न्यायालय में वकालत अवश्य ही कर सकता है।

दिसम्बर 1999 में जो 15 सूत्रीय आचार संहिता घोषित की गई है, वह सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशों के साथ–साथ उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों के लिए भी है।

उच्च न्यायालय की शक्तियां तथा अधिकार क्षेत्र (POWER AND JURISDICTION OF THE HIGH COURT)

भारतीय संघ के प्रत्येक उच्च न्यायालय को दो प्रकार की शक्तियों प्राप्त हैं: (1) न्याय सम्बन्धी, और (2) प्रशासन सम्बन्धी। इसके अतिरिक्त, उच्च न्यायालय 'अभिलेख न्यायालय' (Court of Record) के रूप है: प्रारम्भिक अधिकार क्षेत्र तथा अपीलीय अधिकार क्षेत्र।

(1) प्रारम्भिक अधिकार क्षेत्र

मौलिक अधिकारों के रक्षण से सम्बन्धित विवाद प्रारम्भ से ही उच्च न्यायालय में प्रस्तुत किये जाते हैं, क्योंकि इन विवादों की सुनवाई का अधिकार राज्य के अन्य किसी न्यायालय को प्राप्त नहीं है। मौलिक

अधिकारों की रक्षा हेतु उच्च न्यायालय को वसीयत, विवाह विच्छेद, विवाह विधि, कम्पनी कानून तथा उच्च न्यायालय का अपमान, इत्यादि से सम्बन्धित मुकदमे सुनने का अधिकार है।

भारतीय संघ के उच्च न्यायालयों में कलकत्ता, बम्बई और मद्रास उच्च न्यायालयों को अन्य उच्च न्यायालयों की अपेक्षा अधिक अधिकार क्षेत्र प्राप्त है। संविधान लागू होने के पूर्व इन तीनों महानगरों में **प्रेसीडेन्सी कोर्ट्स** (Presidency Courts) थे, इन तीनों नगरों में प्रेसीडेन्सी कोर्ट्स का दीवानी और फौजदारी अधिकार क्षेत्र अब इन महानगरों में स्थित उच्च न्यायालयों को प्राप्त हो गया है।

(2) अपीलीय क्षेत्राधिकार

उच्च न्यायालय अपने अधीन न्यायालयों के निर्णयों की अपीलें सुनता है, जिसमें दीवानी, फौजदारी और राजस्व सम्बन्धी सभी प्रकार के अभियोग सम्मिलित हैं। फौजदारी मुकदमों में सत्र न्यायालय (Sessions Judge) द्वारा दिये गये मृत्युदण्ड के आदेश पर उच्च न्यायालयों की पुष्टि आवश्यक है। इसके अतिरिक्त उच्च न्यायालय के ही एक न्यायाधीश के निर्णय के विरूद्ध पूरे उच्च न्यायालय में पुनः अपील की जा सकती है। संविधान लागू होने के समय उच्च न्यायालय को राजस्व सम्बन्धी मुकदमों की अपील सुनने का अधिकार नहीं था, परन्तु अब उच्च न्यायालय को राजस्व सम्बन्धी सभी प्रकार के मुकदमों की भी अपील सुनने का अधिकार प्राप्त है। ये अपीलें '**राजस्व मण्डल**' (Revenue Board) के निर्णयों के विरूद्ध होती है। 'न्यायाधिकरणों (Tribunals) के निर्णयों के विरूद्ध भी उच्च न्यायालय में अपील की जा सकती है।'

(3) लेख जारी करने का अधिकार

मूल संविधान के **अनुच्छेद** 226 के द्वारा उच्च न्यायालयों को मौलिक अधिकारों को लागू करने तथा अन्य उद्देश्यों की पूर्ति के लिए लेख, आदेश तथा निर्देश जारी करने का अधिकार प्रदान किया गया है।

(4) न्यायिक पुनर्विलोकन की शक्ति (Power of Judicial Review)

न्यायिक पुनर्विलोकन की शक्ति का आशय हैः **संवैधानिक कानून, केन्द्रीय कानून या राज्य के कानून की संविधान के आधार पर जांच और संविधान के विरूद्ध पाये जाने पर उन्हें अवैध घोषित करना।** संविधान के द्वारा उच्च न्यायालयों को न्यायिक पुनर्विलोकन की यह शक्ति प्रदान की गयी और उच्च न्यायालयों की अधिकार है कि वह किसी भी ऐसे संवैधानिक संशोधन, केन्द्रीय कानून या राज्य के कानून को अवैधानिक घोषित कर दें, जो संविधान के प्रावधानों के विपरीत हो। न्यायिक पुनर्विलोकन उच्च न्यायालय का बहुत अधिक महत्वपूर्व कार्य और शक्ति है और सर्वोच्च न्यायालय ने मार्च 97 में अपने एक महत्वपूर्ण निर्णय में कहा है कि संसद संवैधानिक संशोधन के आधार पर भी न्यायिक पुनर्विलोकन की शक्ति को सीमित नहीं कर सकती।

(5) उच्च न्यायालय, अभिलेख न्यायालय के रूप में (Court of Record)

उच्च न्यायालय अभिलेख न्यायालय भी है जिसका तात्पर्य यह है कि इसकी कार्यवाही तथा निर्णय प्रकाशित किये जाते हैं और साक्षी के रूप में

अधीनस्थ न्यायालयों में मान्य होते है। इसके अतिरिक्त इसे अपने अपमान के लिए दण्ड देने का भी अधिकार प्राप्त है।

(6) प्रशासनिक शक्तियां—उच्च न्यायालय को न्यायिक शक्तियों के अतिरिक्त अपने राज्य की समस्त न्याय व्यवस्था के क्षेत्र में व्यापक प्रशासनिक शक्तियों प्राप्त हैं। यह राज्य की समस्त न्यायिक व्यवस्था पर निम्न प्रकार से नियन्त्रण रखता हैः

(i) उच्च न्यायालय अपने अधीन न्यायालयों और न्यायाधिकरणों (Tribunals) पर निगरानी रखते हैं। अपने निरीक्षण के अधिकार के अन्तर्गत वे अपने अधीन न्यायालयों से किसी भी मुकदमे से सम्बन्धित कागजात मंगवाकर देख सकते हैं।

(ii) यदि अधीन न्यायालय में कोई ऐसा अभियोग चल रहा है, जिसमें भारतीय संविधान की व्याख्या का प्रश्न निहित है, तो उच्च न्यायालय ऐसे मुकदमे को अपने पास मंगा सकता है।

(iii) उच्च न्यायालय एक मुकदमे को एक अधीन न्यायालय से दूसरे अधीन न्यायालय से भेज सकता है।

(iv) अधीन न्यायालयों की कार्य पद्धति, रिकार्ड और रजिस्टर तथा हिसाब, इत्यादि रखने के सम्बन्ध में भी उच्च न्यायालय अपने अधीन न्यायालयों के लिए नियम बना सकता है।

(v) वह अधीन न्यायालय के शेरिफ, क्लर्क, अन्य कर्मचारी तथा वकील, आदि के वेतज सेवा शर्ते और फीस निश्चित कर सकता है।

(vi) यह जिला न्यायालय तथा इससे छोटे न्यायालय के अधिकारियों की नियुक्ति, अवनति, उन्नति और छुटटी, इत्यादि के सम्बन्ध में नियम बना सकता है।

(vii) उच्च न्यायालय के अधिकारियों और कर्मचारियों की नियुक्ति की शक्ति उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधिपति के पास होती है।

उच्चतम न्यायालय के समान ही उच्च न्यायालयों ने भी 1993–2000 के वर्षों में जनहित अभियोग और न्यायिक सक्रियता के आधार पर भारतीय राज व्यवस्था में अपनी भूमिका को पहले से अधिक प्रभावशाली बना लिया है।

उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की स्वतन्त्रता

उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की स्वतन्त्रता के लिए संविधान के द्वारा वैसे ही उपबन्धों की व्यवस्था की गयी है, जैसे उपबन्धों की व्यवस्था सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशों के लिए है। संक्षेप में, वे उपबन्ध निम्नलिखित हैं :

(1) उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की नियुक्ति राज्य सरकार या राज्य विधानमण्डल नहीं, वरन् राष्ट्रपति करता है और यह नियुक्ति न्यायिक योग्यता वाले व्यक्तियों के परामर्श के आधार पर की जाती है।

(2) उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों का कार्यकाल सुरक्षित है। न्यायाधीश अवकाश ग्रहण की आयु तक कार्य करते हैं और अवधि के पूर्व न्यायाधीशों को महाभियोग की विशेष प्रक्रिया के आधार पर ही हटाया जा सकता है।

(3) उच्च न्यायालय का न्यायाधीश सर्वोच्च न्यायालय तथा उन उच्च न्यायालयों, जिनका वह न्यायाधीश नहीं रह चुका है, को छोड़कर अन्य किसी न्यायालय या पदाधिकारी के समक्ष वकालत नहीं कर सकता है।

(4) उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों का वेतन संविधान द्वारा निश्चित कर दिया गया है और पद ग्रहण करने के बाद उनके वेतनख भत्ते, आदि में कोई कमी नहीं की जा सकती है। वेतन, भत्ते, पेन्शन तथा छुटटी के सम्बन्ध में नियम निर्माण का अधिकार संसद को प्राप्त है न कि राज्य के विधानमण्डल को।

(5) न्यायाधीशों का वेतन तथा उच्च न्यायालय का प्रशासनिक व्यय संघ या राज्य सरकार की संचित निधि पर भारित है, इसलिए उन पर संसद या राज्य विधानमण्डल में मतदान नहीं हो सकता है।

(6) उच्च न्यायालय के अधिकारियों की नियुक्ति इस न्यायालय का मुख्य न्यायाधीश करता है तथा उनकी सेवा–शर्तें भी वही निर्धारित करता है।

इस प्रकार भारतीय संविधान द्वारा उच्च न्यायालय की पूर्ण स्वतन्त्रता की व्यवस्था की गयी है और भारतीय संघ के विभिन्न उच्च न्यायालय के अब तक के कार्य के आधार पर कहा जा सकता है कि उच्च न्यायालय सामान्यतया अपने कर्तव्य पालन में स्वतन्त्र और निष्पक्ष रहे हैं।

भारत के उच्च न्यायालय से सम्बंधित अनुच्छेद
(Articles Related to High Court of India)

अनुच्छेद 214– राजकीय उच्च न्यायालय
अनुच्छेद 215– उच्च न्यायालय अभिलेखों के न्यायालय के रूप में
अनुच्छेद 216– उच्च न्यायालय का गठन
अनुच्छेद 217– उच्च न्यायालय के न्यायाधीश पद के लिए नियुक्ति तथा दशाएं
अनुच्छेद 219– न्यायाधीशो का शपथ ग्रहण
अनुच्छेद 221– न्यायधीशो के वेतन संबधिंत इत्यादि
अनुच्छेद 222– न्यायाधीशों का स्थानांतरण
अनुच्छेद 231– दो या दो से अधिक राज्यो के लिए एक साझा न्यायालय
अनुच्छेद 233– जिला न्यायाधीशों की नियुक्ति

राज्य में जिला स्तर पर न्याय व्यवस्था

भारतीय संविधान के द्वारा एकीकृत न्याय व्यवस्था की स्थापना की गयी है। भारतीय संघ की समस्त न्याय व्यवस्था के सर्वोच्च न्यायालय है, उसके नीचे के स्तर पर राज्यों के उच्च न्यायालय हैं। इनसे छोटे न्यायालयों का संचालन राज्यों का उत्तरदायित्व है। भारत के प्रत्येक जिले में तीन प्रकार के अधीनस्थ न्यायालय होते हैं :

1. फौजदारी न्यायालय;
2. दीवानी न्यायालय;
3. राजस्व न्यायालय।

1.फौजदारी न्यायालय

फौजदारी के अन्तर्गत लड़ाई, झगड़े, हत्या, मारपीट, जालसाजी, आदि के विवाद आते हैं। जिला स्तर पर फौजदारी न्यायालय की व्यवस्था निम्न प्रकार है :

सत्र न्यायालय
(Sessions Court)

जिला स्तर पर सबसे बड़ा फौजदारी न्यायालय 'सत्र न्यायालय' या 'सेशन्य जज का न्यायालय' होता है। साधारणतया एक ही व्यक्ति 'सेशन्स' तथा 'जिला जज' दोनों पद धारणा किये रहता है। फौजदारी विवादों का निर्णय करते समय उसे 'सेन्शन्य जज' और दीवानी विवादों का निर्णय करते समय उसे 'जिला जज' कहते हैं। सत्र न्यायालय के सम्मुख मुख्य न्यायिक

दण्डाधिकारी तथा प्रथम एवं द्वितीय श्रेणी के मजिस्ट्रेट के निर्णय के विरूद्ध अपील की जा सकती है। कत्ल, डकैती, आदि फौजदारी क्षेत्र के गम्भीर विवादों की प्रारम्भिक सुनवाई भी सत्र न्यायाधीश के द्वारा ही की जाती है। सेशन जज को मृत्यु–दण्ड देने का अधिकार प्राप्त है, किन्तु इसकी पुष्टि उच्च न्यायालय से करानी होती है।

अपर सेशन जज
(Addl. Sessions Judge)

बड़े जिलों में सेशन जज की सहायता के लिए अपर सेशन जज भी होते हैं जिनके अधिकार सत्र न्यायाधीश के समान होते हैं।

मुख्य न्यायिक दण्डाधिकारी
(Chief Judicial Magistrate)

ये फौजदारी से सम्बधित मुकदमों की सुनवाई करते हैं। मुख्य न्यायिक दण्डाधिकारी 7 वर्ष तक का कारावास तथा जुर्माने का दण्ड दे सकते हैं।

प्रथम श्रेणी का दण्डाधिकारी
(First Class Magistrate)

सेशन जज के नीचे प्रथम श्रेणी के दण्डाधिकारी होते हैं। ये 3 वर्ष तक का कारावास तथा 5,000 रूपये तक का आर्थिक दण्ड दे सकते हैं।

द्वितीय श्रेणी का दण्डाधिकारी
(Second Class Magistrate)

ये प्रारम्भिक अभियोग ही सुनते हैं, अपील नहीं। ये एक वर्ष तक का कारावास तथा 2,000 रूपये तक का आर्थिक दण्ड दे सकते हैं।

न्याय पंचायत
(Justice Council)

फौजदारी क्षेत्र में सबसे निचले स्तर पर न्याय पंचायतें हैं, जिनमें जनता द्वारा निर्वाचित प्रतिनिधि होते हैं। इन पंचायतों द्वारा 250 रूपये तक का आर्थिक दण्ड दिया जा सकता है, किन्तु ये कारावास का दण्ड नहीं दे सकतीं। ये न्याय पंचायतें अपने आप में एक इकाई होती हैं और इनके निर्णय के विरूद्ध कोई अपील नहीं होती है :

फौजदारी क्षेत्र की न्याय व्यवस्था को निम्न तालिका के आधार पर समझा जा सकता है :

न्यायालय	अधिकार
1. सेशन जज	कानून द्वारा निर्धारित कोई भी दण्ड देने का अधिकार। मृत्यु दण्ड देने का अधिकार भी इसमें सम्मिलित है।
2. सहायक सत्र न्यायाधीश	छस वर्ष से अधिक का कारावास, आजन्म कारावास या मृत्यु दण्ड के अलावा कानून द्वारा निर्धारित कोई भी दण्ड दे सकते हैं।
3. मुख्य न्यायिक दण्डाधिकारी	7 वर्ष तक कारावास तथा 5,000 रूपये तक जुर्माना अथवा दोनों ही।
4. मजिस्ट्रेट (प्रथम श्रेणी)	3 वर्ष तक कारावास तथा 5 हजार रूपये तक जुर्माना अथवा दोनों ही।

5. न्याय पंचायत	एक वर्ष तक का कारावास तथा दो हजार रू. तक जुर्माना अथवा दोनों ही।
6. न्याय पंचायत	250 रूपये तक जुर्माना, कारावास–दण्ड देने का अधिकार नहीं।

2.दीवानी न्यायालय
(Civil Court)

धनराशि अथवा चल–अचल सम्पति से सम्बन्धित मामलों की सुनवाई दीवानी न्यायालय करते हैं।

(1) जिला न्यायाधीश
(District Judge)

प्रत्येक जिले में जिला न्यायाधीश दीवानी मामलों का सबसे की अधिकता होने पर अपर जिला न्यायाधीशों की नियुक्ति की जाती है, जिनके अधिकार जिला न्यायाधीश के समान ही होते हैं। इसके अतिरिक्त कुछ बड़े जिलों में विशेष न्यायाधीश, जो अपर जिला न्यायाधीश के समकक्ष होते हैं, नियुक्त किए जाते हैं, जैसे विशेष न्यायाधीश, जो अपर जिला न्यायाधीश के समकक्ष होते हैं, नियुक्त किए जाते हैं, जैसे विशेष न्यायाधीश (हरिजन उत्पीड़न अधिनियम), विशेष न्यायाधीश (आर्थिक अपराध), विशेष न्यायाधीश (आर्थिक अपराध), विशेष न्यायाधीश (दस्यु प्रभावी क्षेत्र), विशेष न्यायाधीश (मादक द्रव्य पदार्थ अधिनियम), न्यायाधीश (पारिवारिक न्यायालय), आदि।

(2) सिविल जज या व्यवहार न्यायाधीश (Senior Division)

जिला जज के न्यायालय के नीचे सिविल जज (सीनियर डिवीजन) का न्यायालय होता है। सिविल जज (सीनियर डिवीजन) को भी किसी भी मूल्य तक के विवादों की प्रारम्भिक सुनवाई का अधिकार प्राप्त है। इसे एक लाख रू. तक के दीवानी विवादों की अपील सुनने का अधिकार प्राप्त है। सिविल जज (जूनियर डिवीजन) के निर्णय की अपीलें सिविल जज (सिनियर डिवीजन) के न्यायालय में की जाती हैं। बड़े जिलों में अपर सिविल जज (सीनियर डिवीजन) भी नियुक्त किये जाते हैं जिनका अधिकार–क्षेत्र सिविल जज या व्यवहार न्यायाधीश (सीनियर डिवीजन) के समान ही होता है।

(3) लघु वाद न्यायालय

ये न्यायालय भी दीवानी विवादों का निस्तारण करते हैं। ये न्यायालय पांच हजार रूपए तक के उन लघु वादों की सुनवाई करते हैं, जिनमें धन वसूली की मांग की गई हो।

इसके अतिरिक्त लघुवाद न्यायालय किराया वसूली व मकानों–दुकानों के किराएदार की बेदखली के 25 हजार रूपए मूल्य तक के वादों की सुनवाई कर सकते हैं। इससे अधिक मूल्य के किराया बेदखली के विवादों की सुनवाई जिला न्यायाधीश, सिविल जज (सीनियर डिवीजन) या सिविल जज (जूनियर डिवीजन) लघुवाद न्यायालय के रूप में करते हैं। लघु वाद न्यायालय के निर्णय के विरूद्ध अपील नहीं की जा सकती, केवल पुनरीक्षण (रिवीजन) प्रस्तुत किया जा सकता है। जिला जज के आदेशों के विरूद्ध रिवीजन उच्च न्यायालय में किया जाता है।

(4) **सिविल जज**
(Junior Division)

पहले जिसे मुंसिफ न्यायालय के नाम से जाना जाता था, अब उसे सिविल जज (जूनियर डिवीजन) का नाम दिया गया है। इसे एक लाख रूपए मूल्य तक के दीवानी विवादों की सुनवाई का अधिकार प्राप्त है। यह न्यायालय अपीलें नहीं सुन सकता। बड़े जिलों में अपर सिविल जज (जूनियर डिवीजन) भी नियुक्त किये जाते हैं जिनका अधिकार–क्षेत्र सिविल जज या व्यवहार न्यायाधीश (जूनियर डिवीजन) के समान ही होता है।

(5) **न्याय पंचायत**
(Justice Council)

ग्रामीण क्षेत्रों में सबसे निचले स्तर पर न्याय पंचायतें होती हैं। इन्हें 500 रूपए तक के मुकदमे सुनने का अधिकार होता है। इनके निर्णय के विरूद्ध अपील नहीं की जा सकती। इस अदालत की एक विशेषता यह है कि कोई भी वकील इसमें मुकदमे की पैरवी नहीं कर सकता। यह व्यवस्था इस दृष्टि से की गई है कि भोलीभाली ग्रामीण जनता को निष्पक्ष और सस्ता न्याय मिल सके।

3. राजस्व न्यायालय
(Revenue Court)

राजस्व न्यायालय लगान या राज्य के राजस्व से सम्बन्धित विवादों की सुनवाई करते हैं। इनकी श्रृंखला निम्न प्रकार है :

राजस्व परिषद
(Revenue Board)

प्रत्येक राज्य में एक **'राजस्व परिषद'** होती है जो राजस्व सम्बन्धी विवादों का निर्णय करने के लिए सबसे बड़ी अदालत है। इसके निर्णय की अपील राज्य के उच्च न्यायालय में की जा सकती है।

आयुक्त
(Commissioner)

राजस्व या माल गुजारी सम्बन्धी कार्य के लिए राज्य को कई कमिश्नरियों में विभक्त कर दिया जाता है और प्रत्येक कमिश्नरी का प्रधान 'कमिश्नर' या आयुक्त कहलाता है। आयुक्त के द्वारा जिलाधीश के फैसले की अपीलें सुनी जाती हैं और आयुक्त के फैसलों की अपीलें **'राजस्व परिषद'** में होती हैं।

जिलाधीश
(Collector)

मालगुजारी की वसूली के लिए हर जिले में एक जिलाधीश होता है जो तहसीलदार तथा सब–डिवीजनल आफीसर के निर्णयों के विरूद्ध अपीलों की सुनवाई करता है।

सब डिवीजनल आफीसर
(S.D.O.)

जिला कई सब–डिवीजन में बंटा होता है और प्रत्येक सब–डिवीजन के प्रधान की 'सब–डिवीजनल आफीसर' कहते हैं। ये जिलाधीश के अधीन रहते हुए जिले में राजस्व तथा शान्ति व्यवस्था सम्बन्धी कार्य करते हैं।

तहसीलदार

सब–डिवीजन तहसीलों में बंटा होता है और प्रत्येक तहसील में एक तहसीलदार होता है। इसका प्रमुख कार्य मालगुजारी की वसूली तथा अपनी तहसील में शान्ति बनाये रखना है। तहसीलदार की सहायता के लिए कई नायब तहसीलदार होते हैं। राजस्व से सम्बन्धित मामलों में राजस्व परिषद से लेकर तहसीलदार तक का कार्यक्षेत्र अग्र तालिका से स्पष्ट हो जाता है :

न्यायालय	अधिकार क्षेत्र
1. राजस्व परिषद	आयुक्तों के निर्णयों के विरूद्ध अपील सुनना।
2. आयुक्त (कमिश्नर)	जिलाधीश के फैसले के विरूद्ध अपील सुनना।
3. जिलाधीश	तहसीलदार के फैसले पर पुनर्विचार करना।
4. सब–डिवीजन आफीसर	सब–डिवीजन में राजस्व के मामलों की सुनवाई करना।
5. तहसीलदार	मलगुजारी वसूल करना।

लोक अदालतें
(Public court)

वर्तमान समय में स्थिति यह है कि उपर्युक्त न्यायालयों से न्याय पाने में बहुत अधिक समय लगता है और यह ठीक ही कहा गया है कि, **'न्याय प्राप्त होने में बिलम्ब लगना, न्याय न मिलना ही है'** (Justice delayed is justice denied) आज न्यायालयों में लाखों की संख्या में विचाराधीन मुकदमें पड़े हैं। इसके अतिरिक्त न्याय पाने की प्रक्रिया में अधिक धन भी व्यव होता है और अन्य अनेक परेशानियों से होकर गुजरना होता है। ऐसी स्थिति में पिछले लगभग 12 वर्षों से मध्य प्रदेश राज्य के विभिन्न भागों में **शिविर** (Camps) के रूप में 'लोक अदालतें' लगाई जा रही हैं। इन लोक अदालतों की कुछ प्रमुख विशेषताएं इस प्रकार हैं :

1. इन अदालतों में मुकदमों का निबटारा आपसी समझौतों के आधार पर किया जाता है और समझौता 'कार्ट फाइल' में दर्ज कर लिया जाता है।

2. इसमें वादी और प्रतिवादी वकील नहीं कर सकते।

3. इसमें वैवाहिक, पारिवारिक व सामाजिक झगड़े, किराया बेदखली, वाहनों के चालान तथा बीमा, आदि के सामान्य मुकदमों पर दोनों पक्षों को समझाकर समझौता करा दिया जाता है।

4. इन अदालतों में सेवा निवृत्त न्यायाधीश, राजपत्रित अधिकारी तथा समाज के प्रतिष्ठित व्यक्ति परामर्शदाता के रूप में बैठते हैं।

5. ये अदालतें ऐसे किसी व्यक्ति को रिहा नहीं करा सकतीं, जिन्हें शासन ने बन्दी बनाया है। ये अदालतें केवल समझौता करा सकती हैं, जुर्माना कर सकती हैं, चेतावनी देकर छोड़ सकती हैं।

ये लोक अदालतें 'जनता अदालतें' के रूप में हैं और इन्हें अभी तक कानूनी मान्यता प्राप्त नहीं हो पायी है। इन अदालतों को कानूनी रूप देने के लिए आवश्यक कानून निर्माण के प्रश्न पर विचार किया जा रहा है।

लोक अदालतों को जिस विचार और उद्देश्य के साथ अपनाया गया था, लोक अदालतें उस उद्देश्य को पूरा करने की दिशा में आगे बढ़ रही है। '31 **दिसम्बर** 1999 तक 49,415 **लोक अदालतों ने** 97 **लाख** 20 **हजार मामले निबटाए** है। इस प्रकार लोक अदालतों की व्यवस्था अपनी

उपयोगिता सिद्ध कर रही है और लोकप्रिय हो रही है। इस बात पर दो मत नहीं हो सकते कि न्याय यदि वस्तुतः न्याय है तो उसे शीघ्र और सस्ता होना चाहिए और इस दृष्टि से लोक अदालतें एक क्रान्तिकारी कदम है। अतः समाज के विभिन्न वर्गों से परामर्श प्राप्त करते हुए लोक अदालतों की व्यवस्था को अधिक श्रेष्ठ रूप देकर उसे अधिकाधिक व्यापक स्तर पर अपनाये जाने की आवश्यकता है।